कुछ देखा

०

कुछ सुना

०

कुछ समझा

प्रबन्ध सम्पादक
सिद्धनाथ मिश्र

•

प्रबन्धक—
आदर्श साहित्य संघ
चूरू (राजस्थान)

•

मुद्रक—
शोभाचन्द सुराना
रेफिल आर्ट प्रेस
३१, बड़तल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता-७

•

मूल्य : २ रुपया

•

प्रथमावृत्ति १०००
अगस्त, १६६०

: महापथ के महान् परिव्राजक

: आचार्य श्री तुलसी

अपनी ओर से

ग्रामानुग्राम-विहार जैन मुनि का जीवन व्रत है। जैन-आगम मुनि के लिए नव कल्पी विहार का विधान करते हैं वह चातुर्मास में एक स्थान में रहे और शेषकाल के आठ महिनों में आठ विहार करे—एक-एक मास एक-एक गांव में रहे।

उग्र विहारी मुनि के लिए दूसरा विधान है। वह गांव में एक रात रहे और नगर में पांच रात रहे। आचार्य श्री ने इस विशेष विधि को भी सामान्य रूप में परिवर्तित किया है। वे नगरों में एक रात भी रहे हैं और एक दिन में कई गांवों का स्पर्श भी किया है। इन बारह वर्षों में आचार्य श्री ने सुदीर्घ यात्राएं की हैं। यू० पी०, बिहार और बंगाल के पाद-विहार का विशेष महत्त्व है। कलकत्ता से राजसमंद का परिव्रजन दीर्घतम है। आठ महीनों में लगभग २०००मील का विहार तेरापंथ के इतिहास में अपूर्व है

आचार्य श्री अपने युग के महान् परिव्राजक हैं। उनके सामने एक उद्देश्य है एक कार्यक्रम है। वे आचार का विकास चाहते हैं और उस विचार का भी विकास चाहते हैं जो अचार को पवित्र बनाए, समृद्ध बनाए। इसके लिए जन-सम्पर्क सहज प्राप्त है। हजारों व्यक्तियों से उन्होंने सम्पर्क किया है और लाखों उनके सम्पर्क में आए हैं। उन्होंने जनता को कुछ दिया भी है और कुछ लिया भी है। वे देने-लेने को अपनी स्वयं की साधना मानते हैं। इसीलिए वे बच पाते हैं-गर्वानुभूति से और लाघवानुभूति से। वे जहाँ कहीं गए वहाँ चरित्र का विचार बलवान् बना, अध्यात्म की लौ प्रज्वलित हुई। श्रुत का प्रवाह बह चला और एक प्राणदा स्फूर्ति का अनुभव हुआ। वे प्रेरणा के स्रोत हैं जहाँ जाते हैं वहाँ एक प्रेरणा छोड़ जाते हैं।

उसे स्थायित्व प्राप्त हो यह अपेक्षा है। चिरकाल से इसका अनुभव किया जारहा है पर वह आज भी समस्या है।

आचार्य श्री की यात्रा के सारे प्रसंग लिखे जाएं तो संभव है कई महा-ग्रन्थ बन जाएं। मैंने इस लघु काय ग्रन्थ में केवल थोड़ी सी रेखाएं खींची है।

परिव्रजन से क्या-क्या प्राप्त होता है, उसकी एक झाकी पाठक को मिल जाए। व्यक्तित्व के निर्माण और विचार-प्रसार के लिए परिव्रजन का अपना स्वतन्त्र महत्त्व है। एक महापुरुष के परिव्रजन का कहना ही क्या? बहुविध अनुभवों को पा वह स्वयं लाभान्वित होता है और उसका योग पा हजारों-हजारों व्यक्ति लाभान्वित होते है। यह पुस्तक और क्या है? लाभ की कहानी ही तो है। लाभ का लोभ-संवरण नहीं हुआ और कुछ निबन्ध लिख डाले। इससे पाठक लाभान्वित नहीं होंगे, ऐसा मै नहीं सोचता।

श्रावण कृष्णा १३, २०१७
बाल-निकेतन राजसमन्द)

—मुनि नथमल

प्रज्ञापना

जनवन्द्य आचार्य श्री तुलसी इस युग के महान् साधक, द्रष्टा और मनीषी हैं। उनके जीवन का क्षण-क्षण आत्म-साधना और लोक-जागरण के पुण्य अभिक्रम से जुड़ा है। उनकी पावन पद-यात्राएं भारत की चिरन्तन आध्यात्मिक संस्कृति का एक सजीव निदर्शन है। ग्राम, नगर, वन,पर्वत, मैदान—जहाँ भी वे जाते हैं, प्रवास करते हैं, अध्यात्म-उत्कर्ष के पुण्य अधिष्ठान बनजाते हैं। एक ओर जहाँ राष्ट्र-प्रसिद्ध लोक नेता उनके निकट संपर्क में आते हैं, दूसरी ओर जन-साधारण उनके सत्संग का लाभ लेते हैं—अत्यन्त निःसंकोच भाव से। जहाँ विद्वान् और साहित्यकार उनके साथ सूक्ष्म चर्चा करते देखे जाते हैं; वहाँ अशिक्षित, अर्धशिक्षित ग्रामवासियों के साथ घुलमिलकर बातें करते, उन्हें जीवन-शुद्धि का मार्ग दिखाते भी उनको हम पाते हैं। क्या धनी और निर्धन, क्या बड़े और छोटे—सभी के लिए उनके यहाँ स्थान है—सभी के लिए उनके द्वार खुले हैं। उनके विराट व्यक्तित्व में उपचार नहीं है, नितान्त सहज भाव है। यह सब उनकी पद-यात्रा और प्रवास में प्रतिदिन सहजतया घटित होता रहता है।

अधिक से अधिक व्यापते हुए प्रकाश को देख तमिस्रा तिलमिला उठे, प्रकाश का प्रतिरोध करने लगे तो कैसा अचरज ?आचार्य श्री की जन्म-कुण्डली में भी कुछ ऐसा ही योग है। जहाँ राष्ट्र के जन-जन की—हार्दिक श्रद्धा और बहुत बड़ा सम्मान उन्हें प्राप्त है' वहाँ कभी-कभी कुछ इने गिने लोगों से विरोध भी उन्हें मिलता है। जिसमें तत्त्व-विमर्शण नहीं भासता, प्रायः वैयक्तिक दुरभिसन्धि रहती है। पर इससे उन महापुरुष को क्या ? उनकी ओरसे चलनेवाले कार्य तो शाश्वतिक सत्य को सहेजे रहते हैं, उनके प्रवाह में कुंठा क्यों व्यापे वे तो निरन्तर अभिवृद्धि की ओर गतिमान् रहते हैं।

आचार्यप्रवर की गत दो वर्ष की पद-यात्रा ,जो मारवाड़ से बंगाल और बगाल से मेवाड़ को हुई, अपने आप में बहुत बड़ा महत्त्व लिये हुए है। उन यात्रा-क्रमों के मधुर संस्मरण, तब की घटित घटनाएं मानवमात्र के लिए प्रेरणा का एक दिव्य स्रोत है। आचार्यप्रवर के अन्तेवासी उनकी पद-यात्रा के सतत सहचारी मुनि श्री नथमलजी ने प्रस्तुत पुस्तक 'कुछ देखाः कुछ सुनाः कुछ समझा' मे इस महनीय पद-यात्रा का बड़ा सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया है, जो यात्रा के सहचारियो के लिए उनके संस्मरण एवं अनुभूति में एक नई स्फुरणा जोड़ेगा, जो साहचर्य में नहीं थे उन्हें उस अप्रतिम आनन्द एवं उत्प्रेरणा की झलक देगा जो साहचर्य में साक्षात् पाते तथा सर्वसाधारण को जीवन-उत्थान के पथ पर अविश्रान्त रूपसे बढ़ते रहने में इससे बल प्राप्त होगा।

आदर्श साहित्य सघ की ओर से प्रस्तुत पुस्तक का प्रकाशन करते हमें अत्यन्त प्रसन्नता है।

पाठक इससे अपनी जीवन-यात्रा में सतोन्मुख बने रहने का दिशा-संकेत लेंगे, ऐसी आशा है।

३१ बड़तल्ला स्ट्रीट
कलकत्ता-७
भाद्र शुक्ला ७, २०१७

जयचन्दलाल दफ्तरी
व्यवस्थापक
आदर्श साहित्य संघ

आभार

'कुछ देखा : कुछ सुना : कुछ समझा' के प्रकाशन में वर्दवान, लाडनूं निवासी श्री माल चन्दजी भूतोड़िया ने अपने पितामह श्री मोहनलालजी भूतोड़िया की पुनीत स्मृति में आर्थिक योग देकर अपनी सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सुरुचि का परिचय दिया है, जो समाज के साधन-सम्पन्न महानुभावों के लिए अनुकरणीय है। आदर्श साहित्य संघ की ओर से हम सादर आभार प्रकट करते हैं।

—व्यवस्थापक
आदर्श साहित्य संघ

कहां क्या है ?

कुछ देखा

कुछ सुना

कुछ

कोई घटना आपात भद्र होती है और परिणाम में विरस। कोई आपात में अभद्र होती है और परिणाम में सरस। कोई आपात भद्र भी नहीं होती और परिणाम भद्र भी नहीं होती। कोई आपात में भी भद्र होती है और परिणाम में भी भद्र। कलकत्ता पहुँचते समय हजारों आँखों में हर्ष के आँसुओं को उमड़ते हुए देखा और वहाँ से विदा होते समय कई हजारों आँखों में चिन्ता के अश्रु-कणों को उछलते हुए देखा। मध्य-काल में कुछ और भी देखा। जितना देखा उतना स्मृति में नहीं है और जितना स्मृति में है उतना शब्दों की पकड़ में नहीं आता। कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन्हें सदा याद रखनी चाहिए। कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन्हें तत्काल भुला देना चाहिए। याद रखने की बातें वे ही नहीं होतीं, जो प्रिय हों और भुला देने की भी वे ही नहीं होतीं जो अप्रिय हों। वे प्रिय और अप्रिय दोनों प्रकार की बातें याद रखने की होती हैं, जो जीवन पर अपना असर छोड़ जाए और वे प्रिय अप्रिय बातें भुला देने की होती हैं, जिनका जीवन पर कोई प्रभावोत्पादक परिणाम न हो। आचार्य श्री तुलसी की यात्रा की कुछ प्रिय और कुछ अप्रिय दोनों प्रकार की घटनाओं पर एक दृष्टि डाल देना उपयुक्त समझता हूँ।

जयपुर से कानपुर

चैत्र शुक्ला ५ को हम जयपुर से चले और अक्षय तृतीया को कानपुर पहुँचे। यात्रा के मील थे ३६२ और दिन लगे ४४। आचार्य श्री तुलसी जैन धर्म के आचार्य हैं। पदयात्रा जैन मुनि का आजीवन व्रत है। इसलिए यह कहना कोई नया आलोक नहीं देगा कि आचार्य श्री और उनका शिष्य-समुदाय सब पैदल चले। अपना सब कुछ अपने कन्धों पर लेकर चलना, न कुछ आगे और न कुछ पीछे, यह असंग्रह भी है, स्वावलम्बन भी और गृहस्थों से शारीरिक सेवा न लेने का व्रत भी। मुँह पर मुखवस्त्रिका, कन्धों

पर बोझ और उन पर रखा हुआ रजोहरण—यह राजस्थान के लिए नहीं, किन्तु उत्तरप्रदेश की जनता के लिए एक अचरज था। हम साधु हैं, यह तो हमारी वेप-भूषा ही बता रही थी। पर हम किस सम्प्रदाय के साधु हैं ? हमारा धाम कहाँ है ? हम कहाँ जा रहे हैं ? क्यों जा रहे हैं ? और कहाँ से आ रहे हैं ? आदि-आदि जिज्ञासाएँ लोगों को मुखरित किये देती थीं। गाँवों में और सडक के पार्श्वों में हजारों व्यक्तियों ने पूछा—बाबा कहाँ से आ रहे है ? कहाँ जायेंगे ? क्या कोई मेला है या कोई तीर्थ करने जा रहे है ? बडे बाबा का धाम कहाँ है ? आदि-आदि। हमारा उत्तर होता—हम जयपुर से आ रहे हैं, कानपुर जाना है, धर्म का उपदेश देते हैं, अणुव्रत का प्रचार करते हैं, धाम कहीं भी नहीं है—वे सब सुन लेते और मान लेते पर एक बात नहीं भी मानते। हमारा धाम कहीं भी नहीं है—यह बात उनके गले नहीं उतरती। धाम नहीं, यह कभी हो सकता है ? कहीं तो होगा ही—पुनरुक्तियाँ बता रही थीं कि उनके संस्कार सुदृढ़ हैं। वे तथ्य को स्वीकार नहीं करने देते। कई लोगों की जिज्ञासाएँ तो अमिट सी होतीं। वे एक से पूछते और फिर दूसरे और तीसरे से और तब तक पूछते ही रहते, जबतक हमारा कोई साथी मिलता रहता। आचार्य श्री की यात्रा का यह पहला अवसर था। यहाँ के लोगों ने साधुओं को देखा था, पर ऐसे साधु और उनका इतना बडा समुदाय कभी नहीं देखा था।

आचार्य श्री बम्बई, महाराष्ट्र, पंजाब, मध्यभारत (वर्तमान मध्यप्रदेश) और राजस्थान की यात्रा कर चुके हैं। उनके लिए यात्रा कोई नयी वस्तु नहीं है। फिर भी हमारी दृष्टि में यह यात्रा पूर्व यात्राओं से नई है और नई इसलिए कि इसमें कार्य-पद्धति अधिक सुव्यवस्थित रहती है। सुव्यवस्था क्रम लाती है और क्रम का मतलब है नवीनता।

जीवन में नवीनता बनी रहे, वह रूढ न हो—यह आकांक्षा नहीं, किन्तु आचार्यश्री का सहज-भाव है दूसरों के लिए यही प्रेरणा-स्रोत बनता है। ६-१० मील चलकर भी हम कार्य-लीन होते हैं, तब दर्शक को एक ही साथ विद्यालय, अन्वेषण-कक्ष, शिल्पशाला, धर्मस्थान के रूप दीख पडते हैं। प्रवृत्तियों की विविधता देख सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि ये

कई दिनों तक यहाँ रहने वाले हैं। किन्तु अपराह्न होते-होते एक आह्वान होता है और देखते-देखते सारा कार्य समेट हम अगले गाँव के लिए चल देते हैं। यह हमारे लिए असंग है और लोगों के लिए आकर्षण। दिन में दो बार चलना, नये मार्ग, नये लोगों को देखना और नई-नई बातें सुनना—यह क्रम-सा बन गया।

राजस्थान के सीमावर्ती गाँवों में आचार्य श्री ने लोगों से पूछा—भाई, तुम्हारे यहाँ खेती कैसी होती है ? उत्तर मिला – बाबा अच्छी होती है। आचार्य श्री ने कहा—फिर तुम्हारे कपड़े फटे और मकान टूटे क्यों ? एक साथ कई बोल पड़े—बाबा ! हमें तो मोसर खा जाता है। उसमें दो-तीन-चार हजार रुपये लग जाते हैं। आचार्य श्री ने कहा—क्या वह करना जरूरी है ? हाँ, बाबा ! वह तो करना ही पड़ता है। कोई नहीं करे तो लोग कहते हैं—यह तो घर में बैठ रोटी खा रहा है और इसका दादा मसान में पड़ा सड़ रहा है। और भी न जाने क्या-क्या कहा जाता है। इसलिए मोसर तो करना ही होता है। एक ओर मैं यह सम्वाद सुन रहा था, दूसरी ओर सोच रहा था कि गरीबी दुःख है और उस दुःख को पैदा करनेवाला स्वयं मनुष्य है। जिनके पास भूमि नहीं है, जीवन-निर्वाह का कोई साधन नहीं है, इसलिए वे दुखी हैं। यह एक प्रकार की समस्या है, किन्तु जिनके पास भूमि है या जीवन-निर्वाह का साधन है, फिर भी वे दुःखी हैं—यह दूसरे प्रकार की समस्या है। मार्क्स ने पहली समस्या को प्रधान मान समाज को पढ़ा और उसके पढ़ने का स्थान चुना पुस्तकालय और हमारे आचार्य श्री दूसरी समस्या को प्रधान मान समाज का अध्ययन कर रहे हैं और उसे पढ़ने के लिए आचार्य श्री का अध्ययन-कक्ष है—गाँव और ग्रामीण जनता का सीधा सम्पर्क। मार्क्स ने समाज-व्यवस्था के परिवर्तन का मूल अर्थ व्यवस्था के परिवर्तन में ढूंढ़ा और आचार्य श्री समाज-व्यवस्था के परिवर्तन का मूल मनुष्य-स्वभाव के परिवर्तन में ढूंढ़ रहे हैं। व्यवस्था को न वे शाश्वत मानते हैं और न उसके परिवर्तन से उनका कोई विरोध है। पर उन्होंने दोनों में से अपना कार्य-क्षेत्र मानव-स्वभाव के परिवर्तन को चुना है। अणुव्रत-आन्दोलन इसी धारणा का मूर्त रूप है। उसका अध्ययन और

परिवर्तन-क्रम इसी दिशा में चल रहा है। हम आगे चले और अध्ययन का क्रम भी आगे बढ़ता चला। हमने चलते-चलते जी० टी० रोड के पास लहलहाते खेत और कहीं-कहीं कटे हुए अनाज के ढिग-ढेर और अनाज भरे खलिहानों को देखा, तो उसके पृष्ठ-भाग में ही फटे-हाल लोगों और फूटी-टूटी दीवारों को देखा। यह विरोधाभास नहीं, किन्तु प्रत्यक्ष विरोध था। पूछा तो तीन कारण और मिले—तम्बाकू, मदिरा और उन्माद। मादक वस्तुओं का सेवन उन्माद पैदा करता है। क्योंकि उन्मत्त व्यक्ति के लिए लड़ना-झगड़ना, मार-काट—ये बहुत सहज बन जाते है। सुना कि कस्बों में फौजदारी के सैकड़ों वकील है तो अचम्भा हुआ। पर वकालत कोई स्वयं-भूत पेशा नहीं है। उसका मुख्य आधार लोगों का मानसिक असन्तुलन है। मानसिक सन्तुलन यानी सयम बना रहे तो अपराध की स्थिति नहीं आती। फौजदारी के वकीलो की भरमार से जान पड़ा कि अपराध अधिक होते है। अपराध की जड़ में उन्माद और मादक वस्तुओ का सेवन छिपा था। हमने सोचा—इस अवाञ्छनीय स्थिति का मूल कारण अज्ञान है। ज्ञान के विकास होने पर सम्भव है—ये लोग उन्माद से बचें। पर खेद इस बात का है कि ज्ञान के क्षेत्र को भी स्वस्थ नहीं पाया। नगरों को देखा, स्कूलों, कालेजों मे परीक्षाएँ चल रही हैं। पुलिस पहरा दे रही है। आचार्य श्री ने कहा—परीक्षार्थी के लिए निरीक्षण की नियुक्ति हो, वहाँ परीक्षार्थी को लज्जा की अनुभूति होनी चाहिए। उस स्थिति मे पुलिस के सरक्षण में परीक्षाएँ हो, यह विद्यार्थियों के लिए कितना अपमान का विषय है! अपमान करने वाला है कौन ? क्या राज्य सरकार को अभिप्रेत है ? कोई समझदार आदमी अपनी भावी पीढ़ी के साथ ऐसा करना चाहे, यह नहीं जँचता। यह अपमान स्वय की प्रवृत्तियो का परिणाम है। इन्हीं दिनों समाचार पत्रों मे पढ़ा—"अन्नामलाई विश्वविद्यालय बन्द कर दिया गया है।" अमुक जगह विद्यार्थियो ने यह किया, अमुक जगह वह किया तो लगा कि अपढ़ लोगों से पढ़ने वाले क्या भले है ? उन्माद इनमे भी गहरा है। मानसिक असन्तुलन भी वैसा ही है। अपढ लोगो मे श्रद्धा का अंश जो बचा है। इन पढ़े-लिखे लोगो के तर्कवाद ने तो उसे भी धो डाला

है। अज्ञान दुःख का मूल है, इसमें कोई सन्देह नहीं, पर ज्ञान दुःख का मूल क्यों बन रहा है—यह प्रश्न चिह्न आज अधिक स्पष्ट है। ये परिस्थितियाँ अणुव्रत-आन्दोलन को प्रोत्साहित कर रही थीं। गाँव-गाँव के लोगों को कहते सुना—इस आन्दोलन की बहुत बड़ी आवश्यकता है। आचार्यजी! इसका प्रचार बड़ी तत्परता से होना चाहिए। आपने इस पदार्थवादी युग में चरित्र-शुद्धि की प्रेरणा दे सारे मानव-समाज का कल्याण किया है।

आचार्य श्री कहते—भाई साहब! अणुव्रत-आन्दोलन को प्रशंसा की भूख नहीं है। वह तो आप से सक्रिय सहयोग चाहता है। या तो आप इसकी आवश्यकता से इन्कार कर दीजिए या स्वयं अणुव्रती बनिए और दूसरों को अणुव्रती बनने की प्रेरणा दीजिए।

इनकी आवश्यकता के अस्वीकार का अर्थ है—मानवता का अस्वीकार। नैतिक योग्यता को विकसित किये बिना मानवता आ नहीं सकती।

जनता ने आचार्यश्री के हृदय को समझा। इन दिनों में ३१ अणुव्रती, १७७० प्रवेशक-अणुव्रती बने।

हाथरस में सौ से अधिक व्यापारियों ने मिलावट न करने का व्रत लिया। अनैतिकता से लोग ऊब रहे हैं। उसे दूर फेंक देना चाहते हैं। पर आर्थिक स्पर्धा इतनी छा गई है कि उसे फेंकना उनके वश की बात नहीं है। सुख-सुविधा के सामने अब नैतिकता का कोई विशेष मूल्य नहीं है।

नैतिकता, जो आध्यात्मिकता का समाजीकृत रूप है, का स्वतन्त्र मूल्य है। वह सहज अपेक्षित है। जब कि मनुष्य का चिन्तन अर्थवादी और मन सुविधावादी बनता है, तब नैतिकता का आन्दोलन जरूरी हो जाता है और चरित्र-विकास सापेक्ष हो जाता है।

यही अपेक्षा आचार्य श्री को लम्बी-लम्बी यात्रा के लिए प्रेरित कर रही है और यही अपेक्षा जनता को आचार्य श्री के निकट ला रही है। आचार्य श्री जनता के और जनता उनकी होती जा रही है।

बहुत लोग जैन-परम्परा से अनजान थे। आचार्य श्री को भेंट देने के

था। शेष दोनों का आकर्षण अस्पष्ट था। पहला विहार नेहरू बाग का हुआ। जन-संकुल नगरों और एकान्त के वास में कितना अन्तर है, यह स्पष्ट अनुभूत हुआ। वहाँ से उन्नाव पहुँचे, जहाँ अलीगढ़ की भाँति मच्छरोंकी अधिकता है। रात को एक वकील के मकान में ठहरे। उनके घर में ही छोटा-सा मन्दिर है। उनकी उपासना विधि को देखकर लगा तर्क-भक्ति को कचोटता है; पर कहीं-कहीं भक्ति तर्क की अन्त्येष्टि ही कर डालती है। अणुव्रतों की चर्चा अच्छी रही। वहाँ से 'बरुआ' आदि गाँवों को पार करते हुए लखनऊ पहुँचे। यातायात के साधनों ने गाँवों और नगरों की सीमाएँ तोड़ दी हैं; फिर भी नगरों की दुनिया गाँवों की दुनिया से भिन्न है। गंगाप्रसाद मेमोरियल हॉल में पहला प्रवचन था। उत्तरप्रदेश के मुख्य मंत्री डा० सम्पूर्णानन्दजी ने स्वागत भाषण किया। उनकी भाषा में भावना और युक्ति दोनों का सामञ्जस्य था। स्थान-स्थान पर भारतीय आस्था भी अभिव्यक्त हो रही थी।

"शीघ्रगामी वाहनों की दुनिया में मन्थर गति से चलनेवाले, समृद्धि के वातावरण में अकिञ्चन भिक्षुक का स्वागत होता है, इससे लगता है कि शीघ्रगामिता और समृद्धि अपने-आपमें मर्यादित नहीं हैं। उन्हें दूसरे पक्ष की भी अपेक्षा है।" आचार्यश्री ने इन शब्दों में अपना भाव प्रस्तुत किया और बीच में कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न भी उपस्थित किए। वे प्रश्न सुकरात की प्रश्न-शैली की याद दिला रहे थे।

आचार्य श्री ने जनता से पूछा—"क्या आप अणुव्रतों से सहमत हैं? यदि हैं तो क्या आप इन्हें अपने लिए उपयोगी मानते हैं? यदि मानते हैं तो क्या आप इन्हें स्वीकार करने की स्थिति में हैं। यदि हैं तो क्या आप अणुव्रती बनना चाहते हैं?" क्षण-भर के लिए लोगों की भावनाएँ आत्म-निरीक्षण में डुबकियाँ लेने लगीं और सम्भव है कि सभी ने अपनी-अपनी शक्ति को तौलने का प्रयत्न किया और इन प्रश्नों का अपने-आपमें उत्तर ढूँढ़ा। भौतिकता का आवरण बहुत गहरा है। आध्यात्मिकता की नोक से वह एक बार भी मिल जाए, यह सरल नहीं। पर सतत् प्रयत्न रहे, तो वह अवश्य ही क्षीण बनता है। कमी है प्रयत्न करनेवालों की। लोग

इस ओर से निराश हुए बैठे है। नैतिकता में बहुतों की निष्ठा है। वे उसका प्रसार और विकास भी चाहते है। किन्तु उन्हें इस दिशा में कोई नेतृत्व नहीं मिल रहा है। हमने जो देखा और सुना उसका सार यही है कि अनैतिकता से सन्तुष्ट कोई नहीं है। जो लोग अधिक अनैतिक हैं, वे भी अनैतिकता से असन्तुष्ट है। वे स्वयं अनैतिक व्यवहार करते है, तब असन्तोष नहीं मानते, किन्तु यह तो सक्रामक बीमारी है। दूसरी ओर से अनैतिक व्यवहार मिलता है, तब वे खीज उठते है और अणुव्रत-आन्दोलन को वे भी आवश्यक बतलाते है। हजारो, लाखों व्यक्तियों से यही सुना, आन्दोलन बहुत आवश्यक है, यह युग की माँग है। इस समय ऐसे आन्दोलन न चलें तो भारत की आत्मा मर जाएगी। आचार्य श्री ने बार-बार यही कहा—मौखिक समर्थन तो खूब मिल रहा है, पर मुझे क्रियात्मक सहयोग चाहिए। प्रशसा खूब मिल रही है। पर मैं उसका करूँ क्या? उसको कहाँ रखूँ? आचार्य श्री की भावना है कि नैतिकता का स्तर व्यापक रूप से उठे। जन मानस यह है कि परिस्थितियाँ बदले बिना यह सम्भव नहीं है। गरीबी है, बेकारी है और भी बहुत कुछ है। इन स्थितियों में कोई नैतिक कैसे बने? गरीबी और नैतिकता में विरोध तो नहीं है। यह विरोध धारणा का है। धनपति केवल धन के पीछे पड़े हुए है। वे सब ओर से प्राथमिकता पा रहे है। गरीबो की भी धारणा उभर आई है। वे भी वैसा ही चाहते है। कृत्रिम आवश्यकताओ ने उनके सामने भी जीवन की समस्याएँ पैदा की है। अधिकार की भावना जाग उठी है। वे समाज के वर्तमान रूप को बदलना चाहते है। धनी लोग चाहते है, वह न बदले। रस्साकसी लगभग सभी जगह देखने को मिली। धनी लोगो की धारणा है कि गरीबो के भाग्य मे ऐसा ही लिखा है। गरीबों की धारणा है कि इनका वैभव हमारी मूर्खता पर पला है। इस जागरण की बेला मे हम इसे पलट देंगे। पहले कर्मवाद की भ्रान्त धारणाएँ व्याप्त थीं। अब उनमें परिमार्जन हो चुका है। आचार्य श्री ने अनेक बार यह आश्चर्य प्रकट किया *कि धनी लोग सही स्थिति का अध्ययन क्यों नहीं करते?* अभी स्थिति नियन्त्रण मे है। थोड़े-से यत्न से उसे सम्हाला जा सकता है। प्रमाद से

सम्भव है, वह जटिल बन जाय। क्रूरता को पनपने का अवसर न दिया जाय, यही अच्छा है।

राजनीतिक दलबन्दी के दर्शन गाँवों में भी मिले। लखनऊ और सीतापुर के बीच हमने सुना कि पार्टीबाजी के सिलसिले में एक आदमी का खून अभी-अभी हुआ है। पंजाब और महाराष्ट्र की यात्रा में हमने सुना था कि यहाँ बात-बात में खून हो जाता है। आवेश का पारा चढ़ा रहता है। यू० पी० के इन जिलों में भी हमें इसका अतिरेक मिला। हत्या करना बहुत बड़ी बात नहीं है। फौजदारी के मामलों और वकीलों की भरमार है। अपराधियों की संख्या भी काफी है। छोटे-छोटे खेत हैं। भूमि कम है और आबादी अधिक। खेतों की सीमा बढ़ाने के लिए भी काफी लड़ाइयाँ हो जाती हैं। अधिक अपराधों का मूल अज्ञान व अशिक्षा है। आवेश या आवेग मनुष्य की सामान्य दुर्बलताएँ हैं। शिक्षित मस्तिष्क उस पर नियन्त्रण रख सकता है। अशिक्षित आदमी उसका प्रयोग कर डालता है। अधिकांश अपराध आकस्मिक आवेग के कारण होते हैं और प्रायः वे ही लोग करते हैं, जिन्हें संयत रहने की शिक्षा नहीं मिलती। आचार्य श्री ने सीतापुर में बन्दियों से कहा—ब्रेक का उपयोग भले ही कहीं और कभी हो; पर मोटर की सुरक्षा उसी में निहित है। यही स्थिति संयम की है। सर्वत्र और सर्वदा भले ही वह उपयोगी न जान पड़े, पर मानवता का प्रहरी वही है। अणुव्रत-आन्दोलन इसीलिए संयमको जीवन मानकर चलता है। संयम ऐसा सामान्य धर्म है, जिस पर कम्युनिस्ट भी कटाक्ष नहीं करते। धर्म-प्रधान युग में धर्म को न मानने वाले नास्तिक कहलाते थे और इस राज-नीति के युग में धर्म को न माननेवाले कम्युनिस्ट कहलाते हैं। सीतापुर की बात है। एक भाई कम्युनिस्टों के बारे में कुछ कह रहा था। आचार्य श्री ने कहा—"आप केवल एकांगी दृष्टि से ही उन्हें क्यों देखते हैं ? उनमें कुछ अच्छाइयाँ भी हैं। आखिर वे भी मनुष्य हैं। उनमें भी भले आदमी हो सकते हैं। पर आज मनुष्य के अंकन का साधन उसका अच्छा या बुरा आचरण नहीं रहा है। वह धार्मिक या राजनैतिक सम्प्रदाय के लेबिल से

आँका जाता है। आस्था और सुझाव अपना-अपना अलग होता है। पर दूरी से सन्देह बढ़ता है और सम्पर्क से प्रेम। बात साधारण है पर है श्रेय। आन्दोलन के कार्यकर्ता यशपाल जी से मिले। आन्दोलन के बारे में बातचीत की। प्रसंगवश उन्होंने कहा—'आन्दोलन के प्रवर्तक यहीं हैं। आप चाहें तो उनसे भी मिलिए और बातचीत कीजिए। यशपाल जी ने कहा—'आप मुझे यशपाल जैन समझकर तो वहाँ चलने के लिए नहीं कह रहे हैं न ?'

कार्यकर्ताओं ने कहा—जी नहीं, हम कम्युनिष्ट यशपाल से बात कर रहे हैं। वे दूसरे ही दिन डालीगंज आए। आचार्य श्री से वार्तालाप हुआ। वह इतना सरल और सहज रहा कि फिर थोड़े ही दिनों में वैसे प्रसंग कई बन गए। और दोनों ओर से ऐसा मनोभाव रहा कि यह क्रम कई दिनों तक चलता रहा। वार्तालाप से जाना कि वे जैन-दर्शन को वैज्ञानिक दर्शन मानते है। उसके अध्ययन के लिए तत्पर भी हैं। पर यथेष्ट सामग्री के अभाव में उनकी इच्छा पूरी नहीं हो रही है।

आत्मवाद और धर्मवाद के विषय में अनेक चर्चाएँ चलीं। सम्भव है अवसर आने पर वे आगे भी कभी चलें। आन्दोलन के बारे में भी उनकी रुचि है।

नैमिषारण्य जाने का अनुरोध था। पर कुछ कठिनाइयों के कारण आचार्य श्री वहाँ नहीं जा सके। इस दिशा में आखिरी विहार क्षेत्र सीतापुर था। वह व्यापार की मंडी है और साहित्य का भी क्षेत्र है। मिश्र बन्धुओं के वंशज डा० नवलबिहारी मिश्र और उनके सहयोगी साहित्य के क्षेत्र में बहुत दिलचस्पी लेते हैं। वे अवधी का शब्दकोष भी बना रहे हैं। प्राकृत शब्द कोष की प्राप्ति के लिए उनमें बड़ी उत्सुकता देखी। वे कह रहे थे कि हमने अर्धमागधी शब्दकोष के लिए कई प्रयत्न किये। प्रकाशक संस्था से माँगा पर वह मिल नहीं रहा है। यह कुछ विचित्र सा ही है, जहाँ कोई उपयोग नहीं, वहाँ पुस्तकें पड़ी है और उपयोग करने वालों को वे मिल नहीं रही हैं।

कानपुर चातुर्मास का निश्चय हो चुका था। जिस मार्ग से गए, वही

मार्ग फिर चुना। सड़क वही थी, गाँव वे ही थे। केवल ऋतु में परिवर्तन हो गया। चिलचिलाती धूप और धधकती आग सी लू राजस्थान की विस्मृति करा रही थी। दस-ग्यारह मील का विहार कर आचार्य श्री परिस्थिति-विजय की बात सिखा रहे थे।

परिस्थिति ने अपना दबाव डाला। एक साध्वी की बलि ली और एक साधु भी उसकी बलि होते-होते बचे। परिस्थिति-विजय की दूसरी घटना भी हमने देखी। एक ताँगेवाला पाँच सौ रुपये की साड़ियों की गठरी लिए आया, तो लोगों के आश्चर्य का पार नहीं रहा। उसने मोटरकार से गठरी को गिरते हुए देखा। उसने पुकारा पर कार आगे चली जा रही थी, उसकी आवाज यात्री लोग सुन न सके। उसने कार के नम्बर ले लिए। वह मुड़ा और बरुआ में जा मोटर वालों को वह गठरी सौंप दी। यह घटना परिस्थितिवादियों को चौंका देनेवाली है। मनुष्य परिस्थितियों से पराजित नहीं होता। वह अपनी धारणाओं से ही पराजित होता है। वास्तव में धारणा का परिवर्तन ही परिस्थिति की विजय है। अणुव्रत-आन्दोलन का प्रयत्न यही है कि मनुष्य की धारणाएँ बदलें। उनके बदलने पर ही समाज का रूप बदल सकेगा।

हमने ऋतु को बदलते देखा। एक बार की बरसात ने लू का अस्तित्व धो डाला। आचार्य श्री के कानपुर आगमन के पहले चरण में प्रकृति का कमनीय रूप देखा। मानव प्रकृति भी नया मोड़ ले—यह सबकी चाह है। वह कैसे ले ? यह आज का ज्वलन्त प्रश्न है। इसका समाधान हम सबको ढूँढ़ना है।

कानपुर से कलकत्ता

पहले लक्ष्य निश्चित होता है फिर गति। कलकत्ता की यात्रा का निश्चय हुआ और आचार्य श्री अपने संघ के साथ उस ओर चले। चलना एक क्रम है। जो भी चलते हैं वे क्षेत्र और काल की मर्यादा को स्वीकार कर चलते हैं। स्वीकृति का एक सिद्धान्त है। अपनी शक्ति के सहारे चलने वाले भी क्षेत्र का स्पर्श करते हैं और वाहन के आरोही भी उसका स्पर्श किये बिना

नहीं चलते। पर काल-मर्यादा दोनों की भिन्न होती हैं। पादयात्री जहाँ महीनों में पहुँच पाते हैं, वहाँ यान-यात्री दिन में या घण्टों में पहुँच जाते हैं। आज के वैज्ञानिक युग में कुछ लोगों की दृष्टि में यह अवैज्ञानिक बात है कि लोग मार्गशीर्ष में कानपुर से चलें और फाल्गुन में कलकत्ता पहुँचें। पर आखिर वैज्ञानिकता है क्या ? क्या थोड़े से समय में क्षेत्र की अधिक दूरी को नापना ही वैज्ञानिकता है ? जीवन की नाप जहाँ छोटी होती जाए वहाँ वैज्ञानिकता की क्या अर्थ है ? हृदय की दूरी बढ़ती जा रही है। आज का युग मनुष्य-मनुष्य के बीच की दूरी को कम करने में असफल रहा है, इतना ही नहीं, प्रत्युत् उसे आगे बढ़ाने में इसका योग है। आचार्य श्री के सामने क्षेत्र की दूरी को कम करने का प्रश्न नहीं था। उनके सामने महत्वपूर्ण प्रश्न था—मनुष्य-मनुष्य के और मानव-मानवता के बीच जो दूरी है वह कैसे मिटे ?

कानपुर को छोड़कर जैसे ही आचार्य श्री गाँवों में पहुंचे तो देखा कि अर्थ के भाव और अभाव में कितना अन्तर है। आन्तरिक शून्यता को लिए हुए भी आज के नगर बाहरी सुख-सुविधाओं के महान् स्रोत बने हुए हैं। और जो गाँव उत्पादन के स्रोत हैं वे साधनों के अभाव में दीन-हीन से लग रहे हैं। नैतिक आन्दोलनों को "अर्थ मनर्थ भावयनित्य" का मर्म समझाने में अधिक कठिनाई का अनुभव हो रहा है और इसलिए हो रहा है कि जनता के सामने प्रमुख प्रश्न सुख-सुविधा का है। उसकी प्राप्ति का अनन्य साधन अर्थ है।

आचार्य श्री अर्थ और उसके द्वारा उपलब्ध होनेवाली सुख-सुविधाओं को त्यागने की बात नहीं कह रहे थे। यह संन्यास की बात है, दूर की भूमिका है। आचार्यश्री कह रहे थे—अर्थार्जन की दोषपूर्ण पद्धति और सुख-सुविधाओं के लिए सब कुछ करने की मनोवृत्ति को त्यागने की बात। जनता ने आचार्य श्री को सुना और इस आशा से सुना कि उसे कोई मार्ग दर्शन मिल रहा है। अनैतिक और अप्रामाणिक होना किसी के लि[ए] गौरव की बात नहीं है। अनैतिक व्यवहार करनेवाले अपने-आप [से] भयभीत रहता है। क्या वह सही अर्थ में शान्ति और सुख की अनुभूति क[र]

सकता है ? इस तथ्य को आचार्य श्री प्राञ्जल भाषा में इस प्रकार रखते कि सुनने वाले को यह अनुभव होता कि हम बहुत कुछ पाकर भी जीवन के वास्तविक लक्ष्य से बहुत दूर हैं। भारतीय जनता में अब भी वैयक्तिक मनोभाव प्रबल हैं। सामुदायिक हित की अपेक्षा वह अपना हित अधिक सोचती है। सभी धर्मों ने दूसरों के हितों में बाधक न बनने की बात कही, पर अपने हित के लिए दूसरों के हितों को कुचलने वालों में धार्मिकों की संख्या कम नहीं है। आचार्य श्री को सुननेवालों में सभी वर्गों के लोग थे—व्यापारी, राज्याधिकारी, शिक्षक, विद्यार्थी आदि। आचार्य श्री ने प्रयागराज की पुण्यभूमि त्रिवेणी के पार्श्व में जो कहा वह अवश्य ही धार्मिकों के लिए एक चुनौती थी। आचार्य श्री ने काव्य की भाषा में कहा –

अरे! धार्मिकों! किस प्रवाह में, अब भी बहते जाते हो।
सत्य धर्म की सही शान को, खोते या रख पाते हो॥ ध्रुवपद॥
मन्दिर में आ भक्त बनें, प्रह्लाद भक्त से भी बढ़कर।
हिरणांकुश से क्रूर कर्मकारी बन जाते घर आकर॥
तो होगा यह प्रभु से धोखा, केवल मन बहलाते हो॥ १॥
कीर्तन, सत्संगत में 'मीरा', 'सूर' तुल्य रस लेते हो।
पर आचरणों में शूर्पणखा का परिचय देते हो॥
सत्संगत में जो पाते, क्या वहीं छोड़कर आते हो॥ २॥
अरे! धार्मिकों! किस प्रवाह में अब भी बहते जाते हो।

इस विचारधारा ने धार्मिकों के मानस को उद्वेलित कर दिया। मानस सोता भी है और जागता भी। जागृति सहज भी होती है और प्रेरित भी। मानस हजार चर्चाओं से नहीं जागता और एक वाणी से जाग जाता है। इसके अनेक उदाहरण हमने इस पद-यात्रा में देखे। एक वाणी हृदय को कैसे आकृष्ट करती है इसका मौखिक परिचय हमें वाराणसी में मिला। और इसका लिखित परिचय ज्ञानोदय की पंक्तियों में मिला। हिन्दू विश्व-विद्यालय के प्राध्यापक महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य ने कहा—"सबके प्रति आत्म समभाव" यह संत का लक्षण है। आपने अपने पहले प्रवचन में कहा—"जातिवाद की तात्त्विकता का स्वीकार मनुष्य के लिये लज्जा की

वात है। हम शूद्रों के घरों से भी भिक्षा लेते हैं—ये शब्द संत के हृदय से ही उद्भूत हो सकते है।

ज्ञानोदय के पृष्ठों में श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' ने लिखा है—

"अणुव्रत-आन्दोलन के प्रवर्तक सत तुलसी ने दो शब्दों में इस विकृति (प्राप्त का सुख न लेना और अप्राप्त की सतत् चाह रखना) का जो चित्र दिया है, उसे हजार विद्वान् हजार-हजार पृष्ठो की हजार पुस्तकों मे भी नहीं दे सकते। वे शब्द है—भूख और व्याधि।

संत की वाणी है—"आज के मनुष्य को पद, यश और स्वार्थ की भूख नहीं, व्याधि लग गई है, जो बहुत कुछ बटोर लेने के बाद भी शान्त नहीं होती।' सत का दिशा निर्देश है कि हम पद, यश, स्वार्थ की भूख से उत्तेजित हों, व्याधि से पीड़ित नहीं।"

आचार्यश्री की दृष्टि मे जाति और अधिकार का कोई मूल्य नहीं है। जिन तत्वों का मूल्य नहीं है वे बढ रहे है और जो बढ़ने चाहिए उनका अवमूल्यन हो रहा है। अणुव्रत-आन्दोलन इस विपर्यय को रोकना चाहता है। यह चरित्र विकास के द्वारा ही मिट सकता है।

आचार्य श्री ने पटना विश्वविद्यालय के सीनेट हॉल में कहा—आज सबसे पहला और सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि मनुष्य-मनुष्य कैसे बने? बिहार के राज्यपाल डा० जाकिर हुसैन ने कहा—आज और सब कुछ बनने का प्रयत्न तो हो रहा है, पर मनुष्य यदि मनुष्य नहीं बनेगा तो वह और कुछ भी नहीं बन सकता। अणुव्रत-आन्दोलन मनुष्य को मनुष्य बनाने का उपक्रम है।

अणुव्रत-आन्दोलन ने जन-जन के हृदय को स्पर्श किया है। इसे वाचिक समर्थन बहुत मिला है। क्रियात्मक सहयोग का प्रश्न आता है तब लोग कुछ पीछे हट जाते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि वे नैतिकता और प्रामाणिकता को पसन्द नहीं करते, किन्तु नैतिकता और रोटी की समस्या के समाधान का कोई गठबन्धन नहीं है। लोगों के मन में पहला प्रश्न रोटी का है, नैतिकता का प्रश्न दूसरा है। आवश्यकता की दृष्टि से यह सच भी है पर उपयोगिता की दृष्टि से यह सच नहीं है। जीवन का

विकास रोटी की उपलब्धि नहीं, किन्तु नैतिकता की उपलब्धि है। रोटी का प्रश्न राजनीति के स्तर पर चलाया गया है। नैतिकता का प्रश्न आज भी अध्यात्म की भूमिका से सटा हुआ है। जहाँ समाजवादी और साम्यवादी प्रणालियाँ विकसित हैं, रोटी का प्रश्न नहीं है, वहाँ भी मनुष्य के प्रति मनुष्य का व्यवहार मैत्री, विश्वास और अभय से परिपूर्ण नहीं है। अनैतिकता का अर्थ केवल व्यापारिक अप्रामाणिकता और रिश्वत लेना ही नहीं है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को आतंकित करता है, शान्ति और सुरक्षा के नाम पर प्रलयकारी अस्त्रों का निर्माण करता है। यह भी अनैतिकता है। इसका समाधान राजनीतिक प्रणालियों का परिवर्तन नहीं, किन्तु संयम का विकास है। "संयमः खलु जीवनम्" संयम ही जीवन है। यह घोष राजगृह की पर्वत कन्दराओं में गूँजा तो सहसा भगवान् महावीर की स्मृति सजीव हो उठी। जैन-संस्कृति समारोह में ढाई हजार वर्ष पुराना अतीत वर्तमान के परिपार्श्व को छू रहा था। वहाँ जैन साहित्य के सम्पादन की चर्चा अधिक प्राणवान् बन गई।

मर्यादा-महोत्सव के अवसर पर आचार्य श्री सैंथिया पहुंचे। आचार्य श्री तेरापंथ के नवें आचार्य हैं और तेरापन्थ एक शताब्दी से मर्यादा या अनुशासन के उपलक्ष में महोत्सव मनाता रहा है। जब अनुशासन की परम्परा लुप्त होती जा रही है उस वेला में यह एक महत्वपूर्ण घटना है। सैंथिया से आचार्य श्री ने कलकत्ता की ओर प्रयाण किया।

कलकत्ता-प्रवास

२०१५ फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी को आचार्य श्री कलकत्ता पधारे। हावड़ा ब्रिज से जुलूस शुरू हुआ। महात्मा गांधी रोड (हरीसन रोड) कलाकार-स्ट्रीट, विवेकानन्द रोड, सेन्ट्रल एवेन्यू होते हुए तिरहट्टी बाजार के पण्डाल में पहुँचा। लगभग १५ हजार व्यक्ति जुलूस में थे। दर्शकों की भीड़ अपार थी। दोनों ओर की फुटपाथों पर हजारों-हजारों लोग जमा थे। ऊँचे-ऊँचे मकानों का प्रत्येक तल्ला जनता से आकीर्ण था। नीचे और ऊपर, दाएँ और बाएँ चारों ओर लोग ही लोग दीख रहे थे। जुलूस

की व्यवस्था तेरापंथी महासभा के स्वयंसेवक कर रहे थे। अपार भीड़ को व्यवस्थित रखना कठिन हो रहा था। जनता में हर्ष का उद्रेक था।

आचार्य श्री पहली बार कलकत्ता में आ रहे थे। तेरापंथ के कोई भी आचार्य अब तक यहाँ नहीं आए थे। इतना बड़ा जैन साधु संघ निकट-वर्ती अतीत में यहाँ नहीं आया था। सचमुच लोगों में आश्चर्य, कुतूहल, जिज्ञासा और उत्सुकता का भाव था।

आचार्य श्री के आगमन के उपलक्ष में स्वागत समारोह का आयोजन किया गया। समारोह का आयोजन आचार्य श्री तुलसी अभिनन्दन समारोह समिति ने किया। तेरापंथ के यशस्वी आचार्य और अणुव्रत-आन्दोलन प्रवर्तक के रूप में आचार्य श्री का अभिनन्दन किया गया।

वर्तमान मेयर श्री त्रिगुणानन्द स्वागत करने वाले थे, पर वे दुर्गापुर चले जाने के कारण समय पर पहुंच नहीं सके। डिप्टी मेयर ने कलकत्ता के नागरिकों की ओर से आचार्य श्री का स्वागत किया। डा० कालीदास नाग, पश्चिम बंगाल के खाद्य-मन्त्री प्रफुल्लचन्द्र सेन, स्वायत्त शासन विभागीय मन्त्री श्री ईश्वरदास जालान, सीताराम सेकसरिया, तेरापंथी महासभा के अध्यक्ष नेमिचन्द गधैया और मन्त्री मोहनलाल बाठिया, तथा मित्र-परिषद् के सदस्यों ने अभिनन्दन किया। कलकत्ता महानगर है। यह तेरापंथी समाज का सबसे बड़ा केन्द्र, हिन्दुस्तान का बड़ा व्यापारी केन्द्र एशिया का सबसे बड़ा नगर और विश्व के पांच बड़े नगरों में एक है। कलकत्ता यात्रा का अर्थ है—अनेक राज्यों, जातियों और राष्ट्रों से एक स्थान में सम्पर्क। वहाँ का कोई कार्य दूर-दूर तक प्रभाव डालने वाला होता है। वैसे तो वह पश्चिमी बंगाल की राजधानी है। यह सहज ही है कि वहाँ बंगाली लोग अधिक संख्या में हैं। किन्तु उड़ीसा, बिहार और उत्तर प्रदेश के लोग भी वहाँ कम नहीं हैं। गुजराती, पंजाबी और दक्षिण भारत के लोग भी वहाँ हैं। राजस्थानियों की संख्या तो बहुत बड़ी है। बड़ा बाजार का क्षेत्र केवल व्यापार का ही नहीं, राजस्थानी लोगों का गढ़ है।

अचार्य श्री वहाँ ३, पोर्चुगीज चर्च स्ट्रीट महासभा-भवन में ठहरे।

कलकत्ता में तेरापंथी महासभा, अणुव्रत समिति और मित्र-परिषद्—ये तीन संस्थाएँ-प्रचार कार्य में संलग्न थीं। भिन्न संस्थाओं की उपयोगिता भी है और इनसे जटिलता भी उत्पन्न होती है।

जहाँ लक्ष्य एक होता है—वहाँ प्रेम और एकता भी होनी चाहिए, कदम एक साथ आगे बढ़ने चाहिए, किन्तु ऐसा होता नहीं। सामने कोई कार्य नहीं होता तब तक एकता या विरोध का परिचय नहीं मिलता। कार्य इनकी कसौटी करता है। आचार्य श्री के आने पर एक विशेष कार्य सामने था। उसने कार्यकर्त्ताओं को कसौटी पर कसा। कानपुर से कलकत्ता पहुँचने तक मित्र-परिषद् ने बड़ी तत्परता से सेवा की। हावड़ा ब्रिज पहुँचते ही एक विवाद खड़ा हो गया। जुलूस में मित्र-परिषद् के स्वयं सेवकों का स्थान महासभा के स्वयंसेवकों ने ले लिया। लक्ष्य सबका यही था कि आचार्य श्री के आगमन का पूरा लाभ उठाया जाए, अधिक-से-अधिक लोगों को जैन-दर्शन, तेरापंथ और अणुव्रत-आन्दोलन की जानकारी दी जाए। पर विवाद यह था कि कार्य कौन करे, किस संस्था के माध्यम से करे। महासभा समूचे समाज की प्रतिनिधि संस्था है। लम्बे समय से वह तेरापंथी समाज के धार्मिक हितों का प्रतिनिधित्व करती रही है। आचार्य श्री के प्रथम आगमन पर वह कुछ कर दिखाए, यह स्वाभाविक है। मित्र-परिषद् एक नई संस्था है। उसके सदस्य तेरापंथी ही हैं। वे तेरापंथी महासभा का विरोध क्यों करें, यह भी समझ में न आए, वैसी बात है। किन्तु विरोध का मूल संस्थाओं में नहीं खोजा जा सकता, वह व्यक्तियों में मिलता है। विरोध यही था कि महासभा और मित्र-परिषद् के कार्यकर्त्ता-गण एक मत नहीं थे, यह बहुत स्पष्ट है कि लक्ष्य की पूर्ति में लगने वालों में मतैक्य नहीं होता तब कार्य सिद्धि आगे सरक जाती है।

आचार्य श्री ने अपने प्रथम वक्तव्य में कहा था "मैं कलकत्ता देखने, भूमि या अर्थ की याचना करने नहीं आया हूँ, वरन् आप लोगों की बुराइयों की भिक्षा मांगने आया हूँ जिससे आप इनसे मुक्त हो जाएँ। इस भावना को कार्यान्वित करने के लिए मैं आपके सामने त्रिसूत्री योजना रखता हूँ।"

१—मद्य-निषेध
२—रिश्वत-निषेध
३—मिलावट-निषेध

आप इन पर मनन करें, तदनुसार योगदान देने के लिए आगे आएँ, पूर्व निर्धारित योजनानुसार प्रचार कार्य शुरू हुआ।

आचार्य श्री के आगमन से शहर में हलचल हुई। प्राथमिक प्रवचन से लोग अत्यन्त आकृष्ट हो गए थे। नाना विध आशाओं से सभी दिल हरे-भरे हो रहे थे। उसकी प्रतिक्रिया लोगों में हुई जिसका एक चित्र विद्वान् बैरिस्टर श्री कालीप्रसादजी खेतान के शब्दों में इस प्रकार है :—

"जैन साधु आचार्य श्री तुलसी के शुभागमन से कलकत्ते में अच्छी चर्चा आरम्भ हुई है। इन्होंने अभिनन्दन समारोह में कहा कि न मैं चन्दा मांगने आया हूँ, न भूमि और न कोई चीज। मैं तो यही मांगने आया हूँ कि अपने-अपने दोषों को आप हमें दे दें। जनता ऐसी वार्तों से स्वभावतः प्रभावित होती है। तुलसी जी की मण्डली यदि दोषों को हमारे सिरों से उतार कर हवा कर दें, तब एक मंगलमय कार्य सम्पन्न होगा। उनकी प्रशंसा जितने बढ़े-चढ़े शब्दों में की गई, उसकी आवश्यकता शायद नहीं थी। आज की दुनिया में स्थिति नाजुक है। बड़ी समझदारी और संयम से काम लेना पड़ता है और बातें कहनी पड़ती हैं, जोश में आनेवाले इन बातों का ध्यान रखें तो तुलसीजी के उद्देश्यों की पूर्ति में और स्थायी फर्कों में कोई संदेह नहीं रहे। तुलसी जी का व्यक्तित्व बहुत ही आकर्षक है उनकी वाणी में ओज और बल है। उनकी योजना सरल और सात्विक और समयानुकूल। इससे अधिक क्या चाहिए। हर मनुष्य-अपने अपने मन और अवस्था के अनुसार लाभान्वित हो। इससे अधिक क्या चाहिए[१] ?"

१५ मार्च को महाजाति-सदन में खाद्य मन्त्री प्रफुल्लचन्द्र सेन ने व्याख्यान का आयोजन किया। जयप्रकाशनारायण और जैनेन्द्रकुमार वहां पर उपस्थित थे। और भी हजारों सम्भ्रान्त नागरिक वहां आए हुए

१—दैनिक विश्वमित्र—कलकत्ता, दिनांक १३ मार्च १९६०।

थे। जयप्रकाशनारायण ने अणुव्रत-आन्दोलन के लिए अपनी सेवाएँ अर्पित करते हुए कहा कि "यह सौभाग्य की बात है कि कलकत्ता जैसे उद्योग और व्यवसाय-प्रधान महानगर में जहाँ हर वर्ग के लोग अहर्निश अर्थार्जन के पीछे ही व्यस्त रहते हैं, आचार्य श्री तुलसी जैसे सन्त का पदार्पण हुआ है। आवश्यकता इस बात की है कि लोग उनके द्वारा प्रदर्शित नैतिक अभ्युत्थान के पथ को समझ, परख और सीख कर जीवन में उनका अनुसरण करें और उसके आधार पर अपने व्यवसाय, उद्योग, धन्धे में कोई ऐसा ठोस कदम उठाएँ कि उनका यहां आना सफल हो उन्होंने यह आशा व्यक्त की कि बंगाल जिसने सदा से देश का नेतृत्त्व किया है नैतिक क्रान्ति का भी नेतृत्त्व करेगा।

लोग चाहे जिस किसी भी धर्म को मानते हों, वे समझें कि जीवन की गाड़ी कुछ सार्वभौम नैतिक मूल्यों की पटरियों पर चलती है। इससे च्युत हो जाने पर वह ऐसी खाई में जा गिरेगी कि यहां से आज का वैज्ञानिक चरमोत्कर्ष भी त्राण नहीं दिला सकता। उन्होंने कहा कि आज की वैज्ञानिक प्रगति जिसके प्रादुर्भाव के साथ-साथ धर्म के सम्बन्ध में अनेक भ्रान्तियां उत्पन्न हुई हैं मानव के लिए एक चुनौती है जिसने मानव समाज को सर्वनाश के कगार पर ला खड़ा किया है। इसके उत्तर में आवश्यकता इस बात की है कि धर्म और आध्यात्मिकता जो मानव जीवन से बिछुड़ गए हैं, उन्हें जीवन में उतारने का प्रयत्न किया जाए। इससे विज्ञान का विनाशकारी रूप भी कल्याणकारी बन जायेगा। मानव धर्म संकुचित नहीं वह तो सभी धर्मों का निचोड़ और सार्वभौम धर्म है जो सभी के लिए एक-सा कल्याणकारी है। आज उस धर्म की आवश्यकता नहीं है, जिससे वैयक्तिक मोक्ष की प्राप्ति होती हो। वैयक्तिक साधना में रत अनेक सन्त आज भी खोह, कन्दराओं में मिलेंगे, पर जिससे समस्त मानव समाज की उन्नति और मुक्ति नहीं होती, वह धर्म मानव धर्म नहीं हो सकता। आज के युग में महात्मा गांधी और शताब्दियों पूर्व भगवान् महावीर और बुद्ध ने इसी प्रकार मानव समाज को उन्नत करने के लिए अध्यात्म-पथ का प्रदर्शन किया था। आचार्य श्री तुलसी का अणुव्रत-आन्दोलन तथा

नोबा का सर्वोदय भी वैयक्तिक शांति के साथ साथ कोलाहल पूर्ण मानव समाज को उन्नत करने का आध्यात्मिक-आन्दोलन है। यह एक शोध कार्य है जिससे लोगों के दैनिक व्यवहार में नैतिक मूल्यों को स्थान मिले और इसीलिए ही इसमें मेरी अभिरुचि है तथा इसीलिए मैं अपनी सेवाएं अर्पित करता हूं।

१६ मार्च को शिक्षायतन हाल में भारतीय संस्कृति संसद के सदस्यों के बीच आचार्य श्री का प्रवचन हुआ।

२२ मार्च को महाबोधि सोसायटी कलकत्ता द्वारा यूनिवर्सिटी हॉल में 'अहिंसा' पर आचार्य श्री के प्रवचन का आयोजन किया गया।

२७ मार्च को स्थानकवासी गुजराती-संघ पोलक स्ट्रीट मे आचार्य श्री का प्रवचन हुआ।

२८ मार्च को म्यूजिएम मे जीव-विज्ञान पर तथा रोयल एसियाटिक सोसाइटी में 'जैन-आगमों में भारतीय-जीवन' पर प्रवचन हुआ।

इस प्रकार एक ओर प्रवचनों का कार्यक्रम चल रहा था। दूसरी ओर विशिष्ट व्यक्ति आचार्य श्री के सम्पर्क मे आ रहे थे। १ अप्रैल को प्रवचन-पण्डाल में मुनि श्री महेन्द्रकुमारजी ने अवधान किए। २ अप्रैल को कुमारसिंह हाल में मुनि श्री श्रीचन्दजी ने अवधान किए। उच्च न्यायालय के न्यायाधीश जे० पी० मित्तल, सुनीति कुमार चटर्जी आदि इन कार्यक्रमों में सम्मिलित हुए थे। जो कुछ अच्छा कार्य होता है उसका अपने आपमें मूल्य होता है किन्तु जनता के द्वारा उसका मूल्यांकन तभी होता है जब वह उस तक पहुंच पाए। वर्त्तमान के प्रचार साधनों में समाचार पत्रों का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कलकत्ता के लगभग सभी अच्छे समाचार-पत्र आचार्य श्री के कार्यक्रमों को अच्छे ढंग से जनता तक पहुचा रहे थे। इन सारी स्थितियों ने एक नई स्थिति को उभारा। जो व्यक्ति तेरापन्थ समाज से कुछ मनोभेद रखते थे उन्हें विरोधी प्रचार की प्रेरणा मिली और धीमी गति से उनका कार्य शुरू हो गया।

५ अप्रैल को मैत्री-दिवस मनाया गया। फाल्गुन बदी १४ को आचार्य श्री कलकत्ता पधारे और चैत्र बदी १३ को मैत्री-दिवस का आयोजन

हुआ। इसके बीच में अनेक कार्यक्रम चले, प्रचार कार्य हुआ, व्यक्तिगत सम्पर्क बढ़ा, पारस्परिक संघर्ष भी चला और उसके समाधान के प्रयत्न भी चले, पर उनका समाधान नहीं हुआ। आचार्य श्री कलकत्ता आए थे, स्थानीय जनता को अपना सन्देश देने के लिए। इष्ट भी यही था कि उनकी शक्ति उसी कार्य में लगे। श्रावकों की आपसी उलझनों के समाधान में ही आचार्य श्री की शक्ति खपे यह किसी को इष्ट नहीं था न स्वयं आचार्य श्री को और न श्रावक-समाज को भी। सेन्थिया-महोत्सव से ही आपसी समाधान का प्रयत्न चल रहा था। मैत्री-दिवस के पूर्व तक वह चलता रहा। कार्य का विभाजन भी किया गया। जैन दर्शन सम्बन्धी कार्य महासभा करे और अणुव्रत समिति के तत्वावधान में अणुव्रत सम्बन्धी कार्य मित्र-परिषद् करे। ये सभी प्रस्ताव कारगर नहीं हुए। संस्था का नाम और बैज आपसी एकता में व्यवधान बन रहे थे। बैज आदि बाहरी उपकरण सुविधा के लिए होते हैं, बहुधा ये कार्यकर्त्ताओं को दुविधा में डाल देते हैं। बैज के प्रश्न को लेकर एक ऐसा प्रश्न खड़ा हुआ, जो कार्य करने के लक्ष्य को गौण बना स्वयं प्रमुख बन गया। अणुव्रत आन्दोलन के द्वारा मैत्री-दिवस मनाया जाए और इस उद्देश्य से कि समूचे विश्व में मैत्री हो और आन्दोलन के कार्यकर्त्ता आपसी विवाद को भी न मिटा पाए, यह आन्दोलन प्रवर्त्तक को कैसे इष्ट हो सकता था। आचार्य श्री लम्बे समय तक इस चर्चा को आपसी समझौते के लिए उपेक्षित करते गए पर ठीक समय पर डोर को खींचना अनिवार्य हो गया। आचार्य श्री ने कहा—वर्तमान बैजों को लेकर आपस में संघर्ष चल रहा है। इसलिए इन बैजों को लगाकर जो सेवा देगा वह ग्राह्य नहीं होगी। आचार्य श्री के इस संकेत ने कार्यकर्त्ताओं को सम्हलने का अवसर दिया।

४ अप्रैल की रात को सारे बैज उतर गए। मैत्री-दिवस के दिन "संयमः खलु जीवनम्" के बैज दीख रहे थे। यह तीसरे वैद्य का सा चमत्कार था। तीन वैद्य थे—पहले का प्रयत्न ऐसा होता जिससे किसी के रोग हो ही नहीं; दूसरा रोग होते ही औषधि दे, रोगी को स्वस्थ्य

बना देता। तीसरा रोग को बढ़ने देता और जब यह असाध्य सा हो जाता तब ऐसी पुड़िया देता कि रोगी स्वस्थ्य हो जाता। लोग उसे बड़ा वैद्य मानने लगे। सारे नगर में उसका प्रभाव फैल गया। एक दिन उसके प्रशंसक उसका यश गा रहे थे, तब तीसरे वैद्य ने कहा—श्रेष्ठतम वैद्य मेरा बड़ा भाई है, जो रोग होने ही नहीं देता। मेरा दूसरा भाई श्रेष्ठतर है, जो रोग होते ही रोगी को स्वस्थ्य कर देता है। उनका कार्य आपके सामने नहीं आता इसलिए आपलोग उसका मूल्य नहीं आंक सकते। मेरा कार्य आपके सामने आता है, इसलिए उसका मूल्य आंका जाता है। आचार्य श्री ने पहले वैद्य का कार्य भी किया, दूसरे का भी किया पर वे लोगों के सामने नहीं आए। लोगों के सामने तीसरे वैद्य का प्रयत्न आया और लोगों ने देखा कि अब समस्या सुलझ रही है। आपसी प्रयत्नों में राजनीतिक अस्पष्टताएं थीं, वे समस्या को सुलझा रहीं थीं। आचार्य श्री के निर्णय में स्पष्टता थी, उससे पहले किंचित कठिनाई का अनुभव हुआ, फिर समस्या सुलझ गई। राजनीतिक अस्पष्टता का स्वरूप ही ऐसा है कि उससे प्रारम्भ में समस्या सुलझती सी लगती है, किन्तु अन्त में उलझ जाती है और स्पष्टता का रूप यह है कि प्रारम्भ में उससे समस्या उलझती सी लगती है किन्तु अन्त में सुलझ जाती है।

समस्या के समाधान का सबसे बड़ा सूत्र है श्रद्धा। किसी भी विवाद का अन्त तर्क से नहीं होता, किन्तु श्रद्धा से होता है। श्रद्धा जीवन की सबसे बड़ी सफलता है। समान श्रेणी के लोगों पर सहज श्रद्धा नहीं होती। उसके लिए आवश्यक है कि एक पहले का हो, दूसरा बाद का, एक ऊपर हो दूसरा उससे नीचे और श्रद्धा करने वाले को श्रद्धेय की उदारता, समवृत्ति और विशेष योग्यता में विश्वास हो। तेरापंथी श्रावकों के सामने यह गम्भीर प्रश्न है कि उनमें नेत्र-स्थानीय श्रद्धेय लोग कम हैं। उनमें यह विशेषता भी है कि वे साधुओं तथा सर्वोपरि आचार्य के प्रति श्रद्धालु हैं। साधुओं की निश्चित सीमा है। वे उसी के अनुसार गृहस्थों को मार्ग-निर्देशन दे सकते हैं। शेष कार्य का दायित्त्व गृहस्थ नेता ही वहन कर सकते हैं। इस स्थिति के समीप पहुंच कर ही गृहस्थों के नेतृत्त्व का मूल्य

आंका जा सकता है। मैत्री-दिवस के दिन कार्यकर्त्ताओं में नया उल्लास था। और कलकत्ता के नागरिक भी उत्सुकता के साथ एकत्रित हुए। रामकृष्ण मिशन इन्स्टीच्यूट के भव्य मैदान में मैत्री-दिवस का आयोजन था। उस दिन के देश काल और परिषद् सभी भव्य थे। मैत्री-दिवस की कार्यवाही का संचालन विद्वान् बैरिस्टर डा० कालीप्रसाद जी खेतान कर रहे थे। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश एस० आर० दास ने प्रारम्भिक भाषण करते हुए कहा—"मुझे मैत्री-दिवस के समारोह पर आकर अत्यन्त प्रसन्नता है। अणुव्रत-आन्दोलन-प्रवर्त्तक आचार्य श्री तुलसी के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क का सुअवसर मैं पा रहा हूँ, यह मेरे लिए और अधिक हर्ष का विषय है। एक द्रष्टा की भाषा में अल्पकालीन सत्संगत भी समुद्र को पार करने में मानव के लिए एक नौका के तुल्य है।" अणुव्रत-आन्दोलन पर बोलते हुए आपने कहा—"अणुव्रत-आन्दोलन जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, हमें व्रती बनने का, पवित्रता एवं धार्मिकता का व्रत लेने संदेश देता है। यह हमें उस जीवन क्रम को ग्रहण करने की प्रेरणा है, जो हमें नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से ऊँचा उठाता है। इसमें रूढ़ि या बाह्य परम्परा के पोषण का स्थान नहीं है। यह मानस में आ। त्मिक पुनर्जागरण का संचार कर देना चाहता है। यह हममें नैतिक का समावेश करना चाहता है, जिन्हें हमने भौतिक स्वार्थों की में फँस गंवा दिया हैं। यह हमें एक सात्विक जीवन जीने का मार्ग हैं, जिसका बहिर्पक्ष और अन्तर पक्ष दोनों पवित्र और उज्ज्वल हों। हमें, ऐसी जीवन-पद्धति अपनाने का शिक्षण देना है, जहाँ दैनिक-व्यव सद्-आचरण के सरल नियमों द्वारा अनुशासित हो। मैत्री-दिवस अणुव्र आन्दोलन का एक भाग है।

उन्होंने मैत्री-भावना पर प्रकाश डालते हुए कहा—"आज की इस नम्र बेला में हम मैत्री-दिवस मनाने को उपस्थित हैं। यह दिवस व्यक्ति-व्यक्ति को आत्म-निरीक्षण और अन्तर-गवेषणा का एक सुन्दर अवसर देता है। गत वर्ष में मैंने क्या उस मार्ग के अनुसरण करने का प्रयत्न किया, जिसे मैं अपना आदर्श मानता हूँ ? क्या उस आदर्श का पावित्र्य मेरे गत वर्ष के

कार्यों में प्रतिबिम्बित रहा ? क्या मैं उन नैतिक मूल्यों के परिपालन में दृढ़ता से जुड़ा रहा, जिन्हें मैंने स्वेच्छा से जीवन-सिद्धान्तों के रूप में स्वीकार किया था ? क्या मैं उन विचारों को जीवन में अपनाए रहा, जिनका बड़ी-बड़ी सभाओं और समारोहों में मैंने बखान किया। मैं आप में प्रत्येक से यह निवेदन करूंगा—स्वयं अपने आप से आप ये प्रश्न पूछें और सचाई के साथ इनके उत्तर ढूढ़ें। इन गवेषणात्मक प्रश्नों की उपेक्षा न कर दें, यह बहाना न कर जाए कि कि हम बिल्कुल अच्छे हैं। हम अपने आपको धोखा न दें। यदि हम अपने आदर्शों के अनुरूप जीवन जीने की अपनी सफलता से आँखें मूँद लेंगे तो ऐसे पवित्र दिनों के मनाने से किसी लक्ष्य की पूर्ति नहीं होगी। हमें अपनी असफलता को स्वीकार करना चाहिए। क्योंकि इसी से हमें उसका संशोधन कर लेने की आशा बधती है। यह वार्षिक दिन हमें एक बार ठहरने और मुड़कर देखने का अवसर देता है कि गत वर्ष हम अपने लक्ष्य की ओर कितने अग्रसर हुए। यदि हम प्रलोभन के दुश्चक्र में फंस पवित्रता और धार्मिकता के सीधे मार्ग से भटक गए तो यही वह दिन है जब हम कदमों को मोड़ सकते हैं। उन्हें सही पथ पर ला सकते हैं तथा अभिप्रेत लक्ष्य की ओर निःसीम यात्रा पर आगे बढ़ सकते हैं। यही वह दिवस है, जो आदर्शों में सन्निहित विश्वास को पुनर्दृढ़ता देता है एवं पूर्णत्व की ओर जाने के हमारे शाश्वत आयास में नवीनता का संचार करता है। मैत्री-दिवस केवल यहाँ पर एकत्रित व्यक्तियों को ही नहीं और न केवल इस उपमहाद्वीप के वासियों को ही नहीं वरन संसार के प्रत्येक भाग के नर-नारियों को मित्रता से रहने का पावन सन्देश देता है।

फादर विलियम ने अपने अनुभव सुनाए। स्थानकवासी मुनि जयन्ती लालजी ने भी वक्तव्य दिया।

आचार्य श्री ने मैत्री-दिवस के विविध पहलुओं का स्पर्श करते हुए कहा—"मैत्री जीवन के परिष्कार का पहला और जीवन की ऊँचाई का चरम सोपान है।

जो व्यक्ति, समाज या संस्थान मैत्री का प्रसार करते हैं, शत्रु-भाव की

परिसमाप्ति कर अपनी मित्रता से दूसरे के हृदय को आप्लावित करते हैं, वे सचमुच ही महान् साध्य की साधना में संलग्न हैं।

ऐसे व्यक्तियों को मैं अपना सक्रिय सहयोगी मानता हूँ।

सामुदायिक जीवन की उपयोगिता के लिए कुछ काल्पनिक सीमाएँ होती हैं। उन्हें मनुष्य ही बनाता है और उसी के लिए वे संहार-हेतु बन जाती हैं। प्रान्त, राष्ट्र, भाषा ओर जाति की सीमाएं आज वैसी ही हो रही हैं।

जो व्यक्ति शत्रुता का शिर-दर्द मोल लेना न चाहें, वे अपने स्वार्थों को सीमित करें। सीमा की परिभाषा है—दूसरे के स्वार्थों को आघात पहुँचे, वहाँ तक न जाए। मैत्री जीवन शांति का सर्वोच्च वरदान है। उसकी उत्पत्ति अभय में और विकास विश्वास में होता है। जो लोग अपनी अधिकृत जनता को, दूसरों को भयभीत करने की प्रेरणा देते हैं, वे अपने लिये भय का वातावरण तैयार कर रहे हैं। जो आज दूसरों को भयभीत कर सकता है, वह कल जिसे अपना मानता है उसे भी भयभीत कर सकता है। बुराई की सीख देने वाला स्वयं उसके परिणामों से बच नहीं सकता। आज मनुष्य जाति के पास प्रलय की प्रचुर सामग्री है। इसके निरोध का एक मात्र विकल्प अब मैत्री ही है।

उल्लासपूर्ण वातावरण में कार्यक्रम का प्रारम्भ हुआ और उसकी समाप्ति भी उसी वातावरण में हुई। सभी दर्शकों के मन में उसकी सुन्दर प्रतिक्रिया हुई। समाचार पत्र में भी उस आयोजन के कार्यवाही को सुन्दर ढंग से स्थान मिला।

१२ अप्रैल को प्रतिरक्षा मन्त्री वी० के० मेनन ने मैत्री व्याख्यान माला के अन्तर्गत एक भाषण दिया। उससे पूर्व आचार्य श्री से संक्षिप्त वार्त्तालाप भी हुआ। मैत्री की आवश्यकता बतलाते हुए उन्होंने कहा—"मैत्री का अर्थ है, दूसरों को अपने तुल्य समझना। भारत सदा से मैत्री-मंत्र का पुजारी रहा है। परन्तु राष्ट्रीय चरित्र का अभाव आज एक सबसे बड़ी समस्या है जिसे स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ११ वर्षों की अवधि में भी सुलझाया नहीं जा सका है। यद्यपि इस अवधि में देश में आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक

कार्यों मे प्रतिबिम्बित रहा ? क्या मैं उन नैतिक मूल्यों के परिपालन में दृढ़ता से जुटा रहा, जिन्हें मैंने स्वेच्छा से जीवन-सिद्धान्तों के रूप में स्वीकार किया था ? क्या मैं उन विचारों को जीवन मे अपनाए रहा, जिनका बड़ी-बड़ी सभाओं और समारोहों मे मैंने बखान किया। मैं आप मे प्रत्येक से यह निवेदन करूंगा—स्वय अपने आप से आप ये प्रश्न पूछें और सचाई के साथ इनके उत्तर ढूढे। इन गवेषणात्मक प्रश्नो की उपेक्षा न कर दें, यह बहाना न कर जाए कि कि हम बिल्कुल अच्छे है। हम अपने आपको धोखा न दे। यदि हम अपने आदर्शों के अनुरूप जीवन जीने की अपनी सफलता से आँखे मूँद लेंगे तो ऐसे पवित्र दिनो के मनाने से किसी लक्ष्य की पूर्ति नही होगी। हमे अपनी असफलता को स्वीकार करना चाहिए। क्योंकि इसी से हमे उसका सशोधन कर लेने की आशा बधती है। यह वार्षिक दिन हमें एक बार ठहरने और मुड़कर देखने का अवसर देता है कि गत वर्ष हम अपने लक्ष्य की ओर कितने अग्रसर हुए। यदि हम प्रलोभन के दुश्चक्र मे फँस पवित्रता और धार्मिकता के सीधे मार्ग से भटक गए तो यही वह दिन है जब हम कदमों को मोड़ सकते है। उन्हें सही पथ पर ला सकते है तथा अभिप्रेत लक्ष्य की ओर निःसीम यात्रा पर आगे बढ सकते है। यही वह दिवस है, जो आदर्शों मे सन्नहित विश्वास को पुनर्दृढता देता है एवं पूर्णत्व की ओर जाने के हमारे शाश्वत आयाम मे नवीनता का सचार करता है। मैत्री-दिवस केवल यहाँ पर एकत्रित व्यक्तियों को ही नहीं और न केवल इस उपमहाद्वीप के वासियों को ही नहीं वरन ससार के प्रत्येक भाग के नर-नारियों को मित्रता से रहने का पावन सन्देश देता है।

फादर विलियम ने अपने अनुभव सुनाए। स्थानकवासी मुनि जयन्ती लालजी ने भी वक्तव्य दिया।

आचार्य श्री ने मैत्री-दिवस के विविध पहलुओं का स्पर्श करते हुए कहा—"मैत्री जीवन के परिष्कार का पहला और जीवन की ऊँचाई का चरम सोपान है।

जो व्यक्ति, समाज या संस्थान मैत्री का प्रसार करते है, शत्रु-भाव की

परिसमाप्ति कर अपनी मित्रता से दूसरे के हृदय को आप्लावित करते हैं, वे सचमुच ही महान् साध्य की साधना में संलग्न हैं।

ऐसे व्यक्तियों को मैं अपना सक्रिय सहयोगी मानता हूँ।

सामुदायिक जीवन की उपयोगिता के लिए कुछ काल्पनिक सीमाएँ होती हैं। उन्हें मनुष्य ही बनाता है और उसी के लिए वे संहार-हेतु बन जाती हैं। प्रान्त, राष्ट्र, भाषा और जाति की सीमाएं आज वैसी ही हो रही हैं।

जो व्यक्ति शत्रुता का शिर-दर्द मोल लेना न चाहें, वे अपने स्वार्थों को सीमित करें। सीमा की परिभाषा है—दूसरे के स्वार्थों को आघात पहुँचे, वहाँ तक न जाए। मैत्री जीवन शांति का सर्वोच्च वरदान है। उसकी उत्पत्ति अभय में और विकास विश्वास में होता है। जो लोग अपनी अधिकृत जनता को, दूसरों को भयभीत करने की प्रेरणा देते हैं, वे अपने लिये भय का वातावरण तैयार कर रहे हैं। जो आज दूसरों को भयभीत कर सकता है, वह कल जिसे अपना मानता है उसे भी भयभीत कर सकता है। बुराई की सीख देने वाला स्वयं उसके परिणामों से बच नहीं सकता। आज मनुष्य जाति के पास प्रलय की प्रचुर सामग्री है। इसके निरोध का एक मात्र विकल्प अब मैत्री ही है।

उल्लासपूर्ण वातावरण में कार्यक्रम का प्रारम्भ हुआ और उसकी समाप्ति भी उसी वातावरण में हुई। सभी दर्शकों के मन में उसकी सुन्दर प्रतिक्रिया हुई। समाचार पत्र में भी उस आयोजन के कार्यवाही को सुन्दर ढंग से स्थान मिला।

१२ अप्रैल को प्रतिरक्षा मन्त्री वी० के० मेनन ने मैत्री व्याख्यान माला के अन्तर्गत एक भाषण दिया। उससे पूर्व आचार्य श्री से संक्षिप्त वार्त्तालाप भी हुआ। मैत्री की आवश्यकता बतलाते हुए उन्होंने कहा—"मैत्री का अर्थ है, दूसरों को अपने तुल्य समझना। भारत सदा से मैत्री-मंत्र का पुजारी रहा है। परन्तु राष्ट्रीय चरित्र का अभाव आज एक सबसे बड़ी समस्या है जिसे स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ११ वर्षों की अवधि में भी सुलझाया नहीं जा सका है। यद्यपि इस अवधि में देश में आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक

समस्याओं का समाधान बहुत हद तक पंचवर्षीय तथा अन्य योजनाओं के द्वारा सम्भव हो सका है पर राष्ट्रीय चरित्र के विकास की समस्या दिन प्रतिदिन दुरुह होती जा रही हैं जिसका कुप्रभाव देश के विकास तथा जीवन के अनेक क्षेत्रों पर भी पड़ा है।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि अतीत में हमारी आजादी के छिन जाने के कारण यह नहीं था कि आक्रमणकारी-विदेशियों की बाह्य सामरिक शक्तियां हमसे उन्नत थी, पर वस्तुतः कारण तो यह था कि हममें आन्तरिक शक्ति (राष्ट्रीय-चरित्र) का अभाव था। इसका विकास हमें करना है जिसके लिए प्रत्येक व्यक्ति को प्रयत्नशील होना होगा। हम विदेशों से और भी चीजों का आयात तो कर सकते है, पर राष्ट्रीय चरित्र का आयात नहीं किया जा सकता। इसके लिए व्यक्ति-व्यक्ति को अपने जीवन में छोटे-छोटे चारित्रिक मूल्यों को अपनाने की आवश्यकता है। छोटी-छोटी बातों के सुधार के बिना हम बड़े कार्यों को नहीं कर सकते है। आवश्यकता इस बात की है कि युवकों मे नैतिकता आए।

यह कहना उचित नहीं है कि भारत एक गरीब देश है, पर वास्तविकता तो यह है कि भारत के लोग गरीब हैं। इस गरीबी का कारण भी वास्तव में लोगों मे राष्ट्रीय चरित्र का अभाव ही है जिसके कारण देश के प्रचुर साधनों का उचित विकास और लाभ नहीं हो पा रहा है।

आचार्य प्रवर ने प्रवचन करते हुए कहा—"मैत्री का अर्थ अपने अधिकार क्षेत्र को सीमित करना है। क्योंकि उसके बिना कोई भी मनुष्य भय-मुक्त नहीं हो सकता और शांतिपूर्वक नहीं जी सकता। साथ ही वह कठिन भी है क्योंकि उसका आधार त्याग है। वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय स्वार्थों को त्यागने का साहस बहुत कम लोगों में है। अधिकाश लोग अधिकार और सत्ता की भाषा में बोलते और सोचते है। जहाँ अधिकार का प्रश्न उग्र होता है, वहाँ मैत्री क्षीण हो जाती है। मैत्री का अर्थ सभी लोगों को प्रसन्न रखना नहीं हो सकता। संघर्ष वहाँ होता है जहाँ एक वस्तु पर प्रत्येक व्यक्ति अधिकार करने वाले होते है।

आज औपचारिक सभ्यता बढ़ी है। बड़े बड़े लोग आपस में मिलते है।

तब हंसी फूट पड़ती है, पर भाषा, वर्ण, जाति, प्रान्त और राष्ट्र के प्रश्न ऐसे हैं जिससे मनुष्य में विद्वेष उत्पन्न होता है।

मैत्री के बिना हम जी नहीं सकते। पंडित नेहरू ने अन्तरराष्ट्रीय राजनीति के क्षेत्र में पञ्चशील की चर्चा चलाई। अनेक राष्ट्रों ने उनका समर्थन किया। पर कठिनाई यह है कि आगे चल कर हर चीज राजनीति बन जाती है। अनाक्रमण का सिद्धान्त यदि सर्वमान्य हो जाए तो मैत्री का सहज विकास हो सकता है।

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी भगवान् महावीर का जन्म दिन है। उस दिन भगवान् की जन्म-जयन्ती नहीं मनाई गई। जबलपुर में कुछ व्यक्तियों द्वारा दिगम्बर-मन्दिर की जैन मूर्तियाँ खण्डित कर दी गई थी। उस काण्ड के विरोध में दिल्ली के जैन-समाज ने इस वर्ष जन्म जयन्ती न मनाने का निश्चय किया। कलकत्ता के जैन समाज ने निश्चय की सूचना देने से पूर्व यहाँ के नेताओं से परामर्श भी नहीं लिया था फिर भी एकता को सम्मान देते हुए कलकत्ता के जैन लोगों ने महावीर जयन्ती न मनाने का निश्चय किया। आचार्य श्री ने उस दिन जैन-जगत् को संबोधित कर कहा—

"जहाँ भगवान् बुद्ध ने करुणा को महत्त्व दिया और रोगों का तात्कालिक उपचार किया, वहाँ भगवान् महावीर ने अहिंसा और संयम पर बल देकर रोगों के कारणों को ही मिटाने का उपाय प्रस्तुत किया।

भगवान् महावीर ने बोधि प्राप्ति के पूर्व अपने को मौन-साधना में लगाया। इस अवधि में उन्होंने किसी को उपदेश भी नहीं दिया। अतः इससे प्रेरणा ग्रहण कर लोग औरों को शुद्धता का पाठ पढ़ाने के पूर्व स्वयं को शुद्ध बनाने का आदर्श ग्रहण करें। भगवान् महावीर ने जहाँ लोगों के समक्ष अपने विचारों को रखा वहाँ उन्होंने 'ही' के स्थान पर 'भी' लाकर दूसरे मतों का भी आदर किया।

जैन सभा द्वारा आयोजित सामूहिक क्षमा दिवस पर जैन एकता के सम्बन्ध में प्रवचन करते हुए आचार्य श्री ने कहा—

"धर्म के मतभेद आज के नहीं हैं, वे भगवान् ऋषभदेव के जमाने से चले आ रहे हैं। उस समय भी ३६३ धर्म सम्प्रदाय थे, जिनकी अपनी

अलग-अलग मान्यताएं और अपने अलग-अलग मत थे। ऐसा जैन शास्त्रों में उल्लेख आता है। अतः मतवादों को समाप्त करना कठिन है, सब धर्मों का एकीकरण हो नहीं सकता। पर हम उस स्थान पर तो एक हो सकते हैं, जिन तत्त्वों पर सब धर्म वाले सहमत हैं। फिर क्यों नहीं निःस्वार्थ वृत्ति से मिलजुल कार्य करें, जिससे परस्पर सौहार्द और बन्धुत्व की भावना बढ़ सके, हम एक दूसरे के अधिक निकट आ सकें। अहिंसा एक ऐसा ही शाश्वत तत्त्व है, जिसको सब धर्मों ने स्वीकार किया है और जैन धर्म की बुनियाद तो उसी पर ही आधारित है।"

कलकत्ता के आयोजन नागरिकों के हृदय का स्पर्श कर रहे थे। किसी ने आचार्य श्री को नए युग के 'मसीहा' कहा, किसी ने युग की चेतना के प्रतिनिधि और किसी ने मानवता के महान् संरक्षक। वहाँ के व्यापारिक वातावरण में नैतिकता और अध्यात्म का स्वर गूँजने लगा। हजारों-हजारों अपरिचित, अर्धपरिचित और परोक्ष परिचित व्यक्ति साक्षात् परिचय में आए।

अणुव्रत आन्दोलन के प्रति पाश्चात्य देशों के लोगों में बड़ी सद्-भावना है और वे अत्यन्त उत्सुकता पूर्वक इसकी ओर देख रहे हैं। आचार्य श्री के कलकत्ता आगमन के बाद विभिन्न देशों के प्रतिनिधि उनके सम्पर्क में आए हैं, अणुव्रत आन्दोलन की विस्तृत जानकारी प्राप्त की है और इस आन्दोलन के व्यापक प्रसार के लिए अपना सहयोग प्रस्तुत किया।

दिनांक १४ अगस्त को भारत स्थित ब्रिटेन के वाणिज्य महादूत के सह-प्रादेशिक प्रतिनिधि श्री डब्ल्यू० जी० ईथम ने आचार्य श्री से भेंट की। अणुव्रत आन्दोलन के अन्तर्गत चल रहे चरित्र जागृति मूलक कार्यक्रमों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर इन्होंने आन्दोलन के पवित्र उद्देश्यों की हार्दिक प्रशंसा की।

दिनांक १७ अगस्त को अमेरिका के भारत स्थित सांस्कृतिक सचिव श्री डनकन इमरिक ने आचार्य श्री से वार्तालाप करते हुए कहा कि मुझे लगता है—प्रभु क्राइस्ट ने जो दर्शन दिया है, अणुव्रत-आन्दोलन उसी के समान है। प्रभु क्राइस्ट ने जिस मनोवैज्ञानिक ढंग से समाज में व्याप्त विकृतियों

को दूर करने का प्रयास किया, अणुव्रत आन्दोलन उसी प्रकार छोटे छोटे व्रतों द्वारा समाज की विकृतियों का परिष्कार कर रहा है।

दिनांक २० अगस्त को फ्रांसीसी वाणिज्य महादूत श्री ए० सारामोद अपने उप वाणिज्य महादूत श्री जीन० एम० पेरिन सहित आए। उन्होंने अणुव्रत आन्दोलन सम्बन्धी अनेक प्रश्न पूछे और समुचित समाधान पाकर ऐसा विश्वास व्यक्त किया कि अणुव्रत-आन्दोलन को विश्व में मानवता की रक्षा करने में सफलता मिलेगी। उन्होंने बातचीत के क्रम में बतलाया कि फ्रांसीसी लोगों में इसके प्रति विशेष अभिरुचि है और इसका प्रचार विदेशों में होना चाहिए। पश्चिमी देश ऐसे आन्दोलन को अत्यन्त आवश्यक समझते हैं। मैं आश्वासन देता हूँ कि अणुव्रत आन्दोलन के प्रचार-प्रसार में पूर्ण सहयोग प्रदान करूँगा, साथ ही उन्होंने अपनी सरकार के लिए प्रेरणा सन्देश मांगा।

आचार्य श्री तुलसी ने अपने संदेश में कहा—"आज प्रत्येक व्यक्ति दूसरों को नियंत्रण में लेना चाहता है। हम आशा करते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति ऐसा करने की अपेक्षा संयमशील बनें और आत्म-नियंत्रण स्वीकार करे। फ्रांसीसी सरकार एवं जनता से हमें इसकी आशा है।

ऐसा लगा कि यहाँ अच्छा कार्य होगा। अच्छे कार्य का अर्थ ही है—स्वल्पता। वह अच्छा कार्य ही क्या, जो विघ्नों से खाली हो और बहुत हो जाए। कुछ लोगों की मध्यकालीन प्रतिक्रिया है कि आचार्य श्री चैत्र, वैशाख के पश्चात् कलकत्ता से विहार कर देते तो जन-मानस पर बहुत ही सुन्दर छाप रह जाती। परन्तु यह बहुत गहरा चिन्तन नहीं है।

आचार्य श्री के विरोध की कसौटी से कसा हुआ रूप सामने नहीं आता तो उनके मानस की गहराई को समझने का जनता को अवसर ही नहीं मिलता। विरोध जब अपने चरम-शिखर पर था तब दूर बैठे-बैठे तेरापंथी लोगों को भी यह अनुभव हुआ कि कलकत्ता में जाकर हमने कुछ न-कुछ खोया है, पाया नहीं। यह अकारण भी नहीं है। विरोध-पत्र दूर-दूर तक पहुँच रहे थे। हमारी स्थिति वहां नहीं पहुंच रही थी। हमारे श्रावकों को व्यवस्थित जानकारी मिले, ऐसा कोई प्रयत्न कलकत्ता के श्रावकों

ने नहीं किया। इसलिए जनता के पास परिस्थिति का एक ही पक्ष पहुंच रहा था। उसीके आधार पर उसकी धारणा बन रही थी, इसलिए आचार्य श्री की कलकत्ता—यात्रा को वह असफल मानें, उसे अस्वभाविक नहीं कहा जा सकता। विरोध का स्वर बाहर से भी उठ रहा था और भीतर से भी, निकट से भी उठ रहा था और दूर से भी। भीतर से विरोध क्यों ? यह सहज ही जिज्ञासा होती है। जिज्ञासा जैसे सहज है वैसे ही उसका समाधान भी सहज है। लोग दो प्रकार की रुचि वाले होते है। कुछ लोग पुराने में ही रुचि रखते है, परिवर्तन नहीं चाहते। कुछ लोग नए को ही चाहते है, परिवर्तन चाहते है। यह नए और पुराने का प्रश्न उन्हीं के सामने होता है, जो चिन्तक नहीं होते।

चिन्तक व्यक्ति यन्त्रवत् नहीं चल सकता। यद्यपि यन्त्र भी चलता है और मनुष्य भी चलता है, पर दोनों की गति में महान् अन्तर होता है। यंत्र निश्चित गति से चलता है। उसमें देश, काल और परिस्थिति का विवेक नहीं होता क्योंकि वह मनुष्य नहीं है। मनुष्य अपनी गति में परिवर्तन लाता है, उसमे देश, काल और परिस्थिति का विवेक होता है, क्योंकि वह यंत्र नहीं है।

आचार्य श्री का चिन्तन बहुत प्रगति कर चुका, कुछ श्रावकों का चिन्तन अभी बहुत पीछे है, यह दूरी एक समस्या है। विरोध इसी में से उपजता है। प्रश्न उठा कि बंगाल अनार्य क्षेत्र है। वहाँ साधुओं को जाने का निषेध है। आचार्य श्री वहां कैसे जा सकते है ?

दूसरा प्रश्न यह आया कि बंगाल में हरियाली, नीलन, फूलन (फफूंदी) बहुत है, शौच जाने का जीव-जन्तु रहित स्थान नहीं है, इसलिए वहाँ जाना उचित नहीं।

तीसरा प्रश्न यह उठा कि एक गाव में शेषकाल में एक मास और वर्षाकाल में चारमास रहने का विधान है। आचार्य श्री शेषकाल में बालीगंज, हेस्टिंग, काशीपुर आदि स्थानों में पृथक् मानकर रहे तो फिर चातुर्मास में उन्हें संयुक्त कैसे माना जा सकता है ?

इन प्रश्नों का समाधान किया गया —

१—बंगाल अनार्य देश नहीं है। भगवान् महावीर ने यहाँ विहार किया है। यहाँ साधु विहार कर सकते हैं।[१]

२—हरियाली और नीलन-फूलन का प्रश्न केवल बंगाल के लिए ही क्यों? इनकी अधिकता मेवाड़-मालवा और खान देश (महाराष्ट्र) में भी है। वहाँ यदि विहार किया जा सकता है तो बंगाल में भी किया जा सकता है। हमें यह अनुभव नहीं होता कि यहाँ से बंगाल की स्थिति भिन्न है।

३—कलकत्ता के बालीगंज, हेस्टिंग, काशीपुर आदि स्थान बड़ा बाजार के क्षेत्र से भिन्न भी है और यह सब 'कलकत्ता-कारपोरेशन' के अन्तर्गत हैं इसलिए अभिन्न भी है। जैसे गांव के बाहरी भाग को भिन्न और अभिन्न माना जाता है, वैसे कलकत्ता के विभिन्न विभागों को भी माना जा सकता है।

इन तीन के अतिरिक्त और छुट फुट प्रश्न आए और उनका समाधान भी किया गया। बाहर से जो विरोध था, उसका स्तर बहुत ही निम्न था। उसे विरोध न कहकर 'गाली-गलौज' कहना ही अधिक उपयुक्त होगा। विश्वबन्धु एक साधारण सा हिन्दी दैनिक पत्र है। उसके माध्यम से यह कार्य प्रारम्भ हुआ। उसका एक पृष्ठ लगभग इसी के लिए निश्चित था। उसमें हमारे निकट के भाई-बन्धु (दूसरे जैन सम्प्रदाय के लोग) ही सक्रिय थे। उनके सहयोग से वह पत्र गाली-गलौज की दिशा में दिन-प्रतिदिन आगे बढ़ता गया। हमारा सिद्धान्त है कि गाली वही देता है, जो दुर्बल होता है, जो मानसिक संतुलन नहीं रख पाता और जिसका स्नायु-संस्थान विकृत होता है। गाली से गाली का प्रतिकार करने में वही समर्थ हो सकता है, जो दुर्बल बने, मानसिक संतुलन को खोए और स्नायु-संस्थान को विकृत बनाए। हम किसी भी स्थिति में ऐसा होना नहीं चाहते थे। दूर रहने वाले इस बात को नहीं जानते कि कलकत्ता के तेरापंथी नौजवानों का कितनी बार कैसे खून उबला और कैसे आचार्य श्री ने उन्हें शान्त किया? हमें आश्चर्य तब होता कि कुछ अच्छे कहलाने वाले लोग भी विश्वबन्धु के

१—देखो परिशिष्ट नं० १

प्रसार में रस लेते। यह मनुष्य की मानसिक दुर्बलता है कि वह दूसरों की प्रगति को अवरुद्ध करने के लिए गलत तत्त्वों को प्रोत्साहित करता है पर वह इस सत्य को भुला देता है कि बुराई को प्रोत्साहन देने का परिणाम कभी उसके लिए भी खतरनाक हो सकता है।

तेरापथी महासभा के कार्यकर्त्ताओं ने विश्वबन्धु के मिथ्या प्रचार का दूसरे समाचार-पत्रों में प्रतिवाद करने की बात सोची। किन्तु दूसरे अच्छे पत्र—उसका प्रतिवाद कर उसे महत्त्व देना पसन्द नहीं करते थे। सच तो यह कि वह उसे पत्र की कोटि में रखना भी नहीं चाहते थे। इस प्रकार प्रतिवाद करने में जो कठिनाई थी उसे जनता ने नहीं समझा प्रत्युत यह समझा कि विश्वबन्धु के समाचारों का प्रतिवाद नहीं किया जा रहा है, इसलिए ये सच है। इसका फलित यही हो सकता है कि गाली से गाली का प्रतिकार करना जैसे त्रुटि पूर्ण है, वैसे ही मिथ्या आलोचनाओं की उपेक्षा करना भी त्रुटि पूर्ण है। इन सभी विरोधों के उपरान्त भी कलकत्ता में आन्दोलन का कार्यक्रम चल रहा था। आन्दोलन की व्यापकता के लिए चिन्तन भी चल रहा था। अणुव्रत समिति के कार्यकर्त्ता सहकारिता के आधार पर कुछ कार्य खड़ा करना चाहते थे। श्री जयप्रकाश नारायण के साथ उनका विचार-विमर्श भी हो रहा था। पर कार्य करने की परिकल्पना जितनी सरल होती है, उतना सरल कार्य नहीं होता। कुछ समस्याएँ नहीं सुलझी, कार्य का प्रारम्भ नहीं हो सका। राजगृह में जैन-संस्कृति सम्मेलन था। उसमें अनेक जैन व जैनेत्तर विद्वानों ने भाग लिया। वहा का वातावरण बहुत ही सुखद था। भगवान् महावीर की पुण्य स्मृतियाँ विपुलाचल आदि पांचों पर्वतों का एकान्तवास, शुद्ध भूमि, शुद्ध जल और शुद्ध वायु, गरम जल के निर्झर, जंगल, हरियाली, गुफा और नाले, ये सब इतने आकर्षक, इतने मोहक और इतने प्रिय थे कि राजगृह से विहार करते समय भी वे रुकने को विवश कर रहे थे। आचार्यश्री की इच्छा थी और अब भी है कि एक चातुर्मास एकान्त में किया जाए। आगम साहित्य की साधना चल रही है, अणुव्रत-आन्दोलन का कार्य चल रहा है, तेरापंथ द्विशताब्दी का आयोजन निकट है, आचार्यश्री तुलसी के

पट्टारोहण का पचीसवां वर्ष आ रहा है और भगवान् महावीर की पचीस सौवीं शताब्दी आ रही है—ये सभी कार्य चिन्तन-सापेक्ष हैं। इसलिए किसी एकान्त स्थान में चतुर्मास हो ऐसी अपेक्षा थी। राजगृह से बढ़कर एकान्त और प्रेरणादायी स्थान दूसरा शायद नहीं हो सकता। हमारी प्रबल इच्छा थी कि आचार्य श्री का इस वर्ष का चतुर्मास यहीं हो। किन्तु कलकत्ता जाने के बाद यहाँ आ सकेंगे, इसमें सन्देह भी था। इच्छा सन्देह आदि भावनाओं को साथ लिए राजगृह के पर्वतों की उपत्यकाओं को पार कर कलकत्ता पहुंचे।

फाल्गुन अधूरा और चैत्र पूरा नहीं बीता। वैशाख आधा बीता और चातुर्मास के निर्णय की संभावना पुष्ट हो गई। कलकत्ता में जो क्रम चल रहा था, वह सन्तोषजनक था। साहित्य-साधना में भी वहाँ कोई कठिनाई नहीं थी। साहित्य पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध था। तेरापंथी महासभा का संग्रह भी अच्छा है। पूर्णचन्द्रजी नाहर के संग्रह से भी पुस्तकों का उपयोग करने की सुविधा प्राप्त थी। श्रीचन्दजी रामपुरिया का व्यक्तिगत संग्रह भी उपयोगी है और भी अन्य पुस्तकों का योग प्राप्त था। समय भी पर्याप्त मिलता था। आचार्य श्री तुलसी चातुर्मास का निर्णय करने में साहित्य-कार्य की सुविधा को प्राथमिकता दे रहे थे। कलकत्ता में साहित्य-साधना, आन्दोलन की भावना का प्रसार दोनों का सुयोग था। इसलिए वहाँ चातुर्मास की संभावना पुष्ट होती गई। जनता का भी अनुरोध था। आचार्य श्री कलकत्ता आए और दो मास ठहर कर वापस चले जाएँ—यह लोगों को कैसे ही लगता था? वे आठ सौ मील की पूरी यात्रा का विश्राम ही मानने को तैयार नहीं थे। समूचे साधु-संघ को राजस्थान में छोड़ इतनी दूर बार-बार आना सहज बात भी नहीं है। चतुर्मास की प्रार्थनाएँ भी कम बलवान् नहीं थीं। इन सभी कारणों ने कलकत्ता चतुर्मास की स्थिति का निर्माण किया। अक्षय तृतीया को काशीपुर में आचार्य श्री ने चातुर्मास की घोषणा करते हुए कहा "इस वर्ष का चातुर्मास काशीपुर बालीगंज कलकत्ता या कलकत्ता के आसपास के क्षेत्रों में करने की भावना है। हजारों लोग हर्ष विभोर थे। उनके लिए आचार्य श्री का चातुर्मासिक

प्रसार में रस लेते। यह मनुष्य की मानसिक दुर्बलता है कि वह दूसरों की प्रगति को अवरुद्ध करने के लिए गलत तत्त्वों को प्रोत्साहित करता है पर वह इस सत्य को भुला देता है कि बुराई को प्रोत्साहन देने का परिणाम कभी उसके लिए भी खतरनाक हो सकता है।

तेरापंथी महासभा के कार्यकर्त्ताओं ने विश्वबन्धु के मिथ्या प्रचार का दूसरे समाचार-पत्रों में प्रतिवाद करने की बात सोची। किन्तु दूसरे अच्छे पत्र—उसका प्रतिवाद कर उसे महत्त्व देना पसन्द नहीं करते थे। सच तो यह कि वह उसे पत्र की कोटि में रखना भी नहीं चाहते थे। इस प्रकार प्रतिवाद करने में जो कठिनाई थी उसे जनता ने नहीं समझा प्रत्युत यह समझा कि विश्वबन्धु के समाचारों का प्रतिवाद नहीं किया जा रहा है, इसलिए ये सच हैं। इसका फलित यही हो सकता है कि गाली से गाली का प्रतिकार करना जैसे त्रुटि पूर्ण है, वैसे ही मिथ्या आलोचनाओं की उपेक्षा करना भी त्रुटि पूर्ण है। इन सभी विरोधों के उपरान्त भी कलकत्ता में आन्दोलन का कार्यक्रम चल रहा था। आन्दोलन की व्यापकता के लिए चिन्तन भी चल रहा था। अणुव्रत समिति के कार्यकर्त्ता सहकारिता के आधार पर कुछ कार्य खड़ा करना चाहते थे। श्री जयप्रकाश नारायण के साथ उनका विचार-विमर्श भी हो रहा था। पर कार्य करने की परि-कल्पना जितनी सरल होती है, उतना सरल कार्य नहीं होता। कुछ समस्याएँ नहीं सुलझी, कार्य का प्रारम्भ नहीं हो सका। राजगृह में जैन-संस्कृति सम्मेलन था। उसमें अनेक जैन व जैनेत्तर विद्वानों ने भाग लिया। वहा का वातावरण बहुत ही सुखद था। भगवान् महावीर की पुण्य स्मृतियाँ विपुलाचल आदि पाचों पर्वतों का एकान्तवास, शुद्ध भूमि, शुद्ध जल और शुद्ध वायु, गरम जल के निर्झर, जंगल, हरियाली, गुफा और नाले, ये सब इतने आकर्षक, इतने मोहक और इतने प्रिय थे कि राजगृह से विहार करते समय भी वे रुकने को विवश कर रहे थे। आचार्यश्री की इच्छा थी और अब भी है कि एक चातुर्मास एकान्त में किया जाए। आगम साहित्य की साधना चल रही है, अणुव्रत-आन्दोलन का कार्य चल रहा है, तेरापंथ द्विशताब्दी का आयोजन निकट है, आचार्यश्री तुलसी के

पट्टारोहण का पचीसवां वर्ष आ रहा है और भगवान् महावीर की पचीस सौवीं शताब्दी आ रही है—ये सभी कार्य चिन्तन-सापेक्ष हैं। इसलिए किसी एकान्त स्थान में चतुर्मास हो ऐसी अपेक्षा थी। राजगृह से बढ़कर एकान्त और प्रेरणादायी स्थान दूसरा शायद नहीं हो सकता। हमारी प्रबल इच्छा थी कि आचार्य श्री का इस वर्ष का चतुर्मास यहीं हो। किन्तु कलकत्ता जाने के बाद यहाँ आ सकेंगे, इसमें सन्देह भी था। इच्छा सन्देह आदि भावनाओं को साथ लिए राजगृह के पर्वतों की उपत्यकाओं को पार कर कलकत्ता पहुंचे।

फाल्गुन अधूरा और चैत्र पूरा नहीं बीता। वैशाख आधा बीता और चातुर्मास के निर्णय-की संभावना पुष्ट हो गई। कलकत्ता में जो क्रम चल रहा था, वह सन्तोषजनक था। साहित्य-साधना में भी वहाँ कोई कठिनाई नहीं थी। साहित्य पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध था। तेरापंथी महासभा का संग्रह भी अच्छा है। पूर्णचन्द्रजी नाहर के संग्रह से भी पुस्तकों का उपयोग करने की सुविधा प्राप्त थी। श्रीचन्दजी रामपुरिया का व्यक्तिगत संग्रह भी उपयोगी है और भी अन्य पुस्तकों का योग प्राप्त था। समय भी पर्याप्त मिलता था। आचार्य श्री तुलसी चातुर्मास का निर्णय करने में साहित्य-कार्य की सुविधा को प्राथमिकता दे रहे थे। कलकत्ता में साहित्य-साधना, आन्दोलन की भावना का प्रसार दोनों का सुयोग था। इसलिए वहाँ चातुर्मास की संभावना पुष्ट होती गई। जनता का भी अनुरोध था। आचार्य श्री कलकत्ता आए और दो मास ठहर कर वापस चले जाएँ—यह लोगों को कैसे ही लगता था ? वे आठ सौ मील की पूरी यात्रा का विश्राम ही मानने को तैयार नहीं थे। समूचे साधु-संघ को राजस्थान में छोड़ इतनी दूर बार-बार आना सहज बात भी नहीं है। चतुर्मास की प्रार्थनाएँ भी कम बलवान् नहीं थीं। इन सभी कारणों ने कलकत्ता चतुर्मास की स्थिति का निर्माण किया। अक्षय तृतीया को काशीपुर में आचार्य श्री ने चातुर्मास की घोषणा करते हुए कहा "इस वर्ष का चातुर्मास काशीपुर बालीगंज कलकत्ता या कलकत्ता के आसपास के क्षेत्रों में करने की भावना है। हजारों लोग हर्ष विभोर थे। उनके लिए आचार्य श्री का चातुर्मासिक

इस प्रकरण का आरम्भ 'खादी-भण्डार' से होता है। वहाँ साध्वियां ठहरी हुई थीं। एक रात को दो साध्वियां 'परठने' के लिए गईं। किसी कारणवश वे आगे नहीं जा सकीं और खादी-भण्डार के आस पास की सड़क पर उसे 'परठ' दिया। इसकी चर्चा हुई। आचार्य श्री तक यह बात पहुंची, आचार्य श्री ने इसकी पुनरावृत्ति न हो ऐसी व्यवस्था कर दी। जिन लोगों को जितना मतलब विरोध से था, उतना घटना की सचाई से नहीं था, वे प्रचार की इस कक्षा में उतर आए कि "आचार्य तुलसी के साधु-साध्वियों ने कलकत्ता महानगर की सड़कों को शौचालय बना लिया है। ये सड़कों पर मल-मूत्र फेंकते हैं। नगर में गंदगी फैलाते हैं, आदि।" इस प्रचार के उद्देश्य की गहराई में न जाना ही अच्छा है पर इसका संभावित स्थूल उद्देश्य यह था कि इसके द्वारा अणुव्रत-आन्दोलन और आचार्य श्री तुलसी के प्रति जन-मानस में घृणा भरी जाए। इस घृणा का आन्दोलन चलाने वालों ने कभी अपने लिये भी सोचा होगा? अपनी अनैतिक गन्दगी के लिये भी कभी मन में घृणा की होगी? खैर वे न भी सोचें और सच तो यह कि घृणा का आन्दोलन चलाने वालों को बहुत सोचना नहीं पड़ता। प्रेम का आन्दोलन चलाने वालों को पग-पग पर चिन्तन करना होता है। इसलिए आचार्य श्री ने कहा—"यदि मेरे यहाँ रहते जनता को कष्ट हो तो मुझे यहाँ से चले जाने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं होगी।

आचार्य श्री हेस्टिंग में प्रभुदयाल डाबड़ीवाल के 'प्रभु-निवास' में थे तब कुछ व्यक्ति इस प्रसंग को लेकर आए। आचार्य श्री ने संक्षेप में उन्हें बताया कि "फ्लश की टट्टियों का प्रयोग करना हमारी विधि के अनुकूल नहीं है। पर इतना मैं कह सकता हूँ कि वैसा कार्य हम नहीं करते, जिससे जनता को कष्ट हो।"

इस प्रसंग को लेकर कई पूंजीपति और समाजसेवी मिले। आचार्य श्री ने उनके सामने अपनी नीति स्पष्ट कर दी। फिर भी वह सिल-सिला चलता रहा। विरोध गंदगी का नहीं था, वह था आचार्य श्री की प्रगति का। जो सामने होता है वही सच नहीं होता। बहुधा होता यह है कि सच वह होता है जो सामने नहीं होता जो लोग विरोध की पृष्ठभूमि से परिचित

इस प्रकरण का आरम्भ 'खादी-भण्डार' से होता है। वहाँ साध्वियां ठहरी हुई थीं। एक रात को दो साध्वियां 'परठने' के लिए गईं। किसी कारणवश वे आगे नहीं जा सकीं और खादी-भण्डार के आस पास की सड़क पर उसे 'परठ' दिया। इसकी चर्चा हुई। आचार्य श्री तक यह बात पहुंची, आचार्य श्री ने इसकी पुनरावृत्ति न हो ऐसी व्यवस्था कर दी। जिन लोगों को जितना मतलब विरोध से था, उतना घटना की सचाई से नहीं था, वे प्रचार की इस कक्षा में उतर आए कि "आचार्य तुलसी के साधु-साध्वियों ने कलकत्ता महानगर की सड़कों को शौचालय बना लिया है। ये सड़कों पर मल-मूत्र फेंकते हैं। नगर में गंदगी फैलाते हैं, आदि।" इस प्रचार के उद्देश्य की गहराई में न जाना ही अच्छा है पर इसका संभावित स्थूल उद्देश्य यह था कि इसके द्वारा अणुव्रत-आन्दोलन और आचार्य श्री तुलसी के प्रति जन-मानस में घृणा भरी जाए। इस घृणा का आन्दोलन चलाने वालों ने कभी अपने लिये भी सोचा होगा ? अपनी अनैतिक गन्दगी के लिये भी कभी मन में घृणा की होगी ? खैर वे न भी सोचें और सच तो यह कि घृणा का आन्दोलन चलाने वालों को बहुत सोचना नहीं पड़ता। प्रेम का आन्दोलन चलाने वालों को पग-पग पर चिन्तन करना होता है। इसलिए आचार्य श्री ने कहा—"यदि मेरे यहाँ रहते जनता को कष्ट हो तो मुझे यहाँ से चले जाने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं होगी।

आचार्य श्री हेस्टिंग में प्रभुदयाल डाबड़ीवाल के 'प्रभु-निवास' में थे तब कुछ व्यक्ति इस प्रसंग को लेकर आए। आचार्य श्री ने संक्षेप में उन्हें बताया कि "फ्लश की टट्टियों का प्रयोग करना हमारी विधि के अनुकूल नहीं है। पर इतना मैं कह सकता हूँ कि वैसा कार्य हम नहीं करते, जिससे जनता को कष्ट हो।"

इस प्रसंग को लेकर कई पूंजीपति और समाजसेवी मिले। आचार्य श्री ने उनके सामने अपनी नीति स्पष्ट कर दी। फिर भी वह सिल-सिला चलता रहा। विरोध गंदगी का नहीं था, वह था आचार्य श्री की प्रगति का। जो सामने होता है वही सच नहीं होता। बहुधा होता यह है कि सच वह होता है जो सामने नहीं होता जो लोग विरोध की पृष्ठभूमि से परिचित

प्रवास वरदान था। प्रकृति की यह विचित्र घटना है कि एक ही स्थिति को कोई एक वरदान मानता है तो दूसरा उसे अभिशाप मानता है। कुछ लोग आचार्य श्री के यशस्वी-जीवन और बढ़ते हुए वर्चस्व को आवृत्त करने का निरन्तर यत्न करते रहे हैं। वे नहीं चाहते थे कि आचार्य श्री लम्बे समय तक कलकत्ता में रहें। विरोध कर जनता को उभाड़े बिना आचार्य श्री नहीं जाएंगे और उन्हें विश्वास था कि विरोध से घबड़ा कर वे कलकत्ता छोड़ देंगे। विरोध का प्रारम्भ अणुव्रत-आन्दोलन और तेरापंथ के मान्यताओं की पृष्ठभूमि में हुआ। इन्हीं दिनों भंवरमल सिंघी की 'अणुव्रत एक प्रवञ्चना' शीर्षक पुस्तिका प्रकाशित हुई। उसमें सबसे अधिक आश्चर्यकारी था—प्रज्ञाचक्षु पं० सुखलालजी के साथ हुआ सिंघीजी का पत्र-व्यवहार। पंडितजी ने जो लिखा है वह उनकी गंभीरता के अनुरूप नहीं है, इतना कहना ही पर्याप्त होगा। इस पुस्तिका के उत्तर में एक पुस्तिका मैंने लिखी और एक मुनि श्री नगराजजी ने। इसके बाद अच्छे स्तर का विरोध नहीं हुआ। आचार्य श्री ने जैसे ही चातुर्मास की घोषणा की वैसे ही निम्न कोटि का विरोध भड़क उठा।

जैन साधुओं के प्रति जनता में घृणा फैलाने के लिए सुदूर अतीत में ऐसा विरोध शायद किया गया होगा किन्तु निकट के अतीत में ऐसे विरोध का उल्लेख नहीं मिलता। इस विरोध का नामकरण था—'मल-मूत्र प्रकरण'। इस विरोध में जो व्यक्ति सम्मिलित हुए, वे सबके सब दुर्भावना से ग्रस्त थे, यह नहीं कहा जा सकता। वास्तविकता यह थी कि कुछ एक व्यक्तियों के मन में विरोध का भाव था और कुछ एक उनके भुलावे में आकर पीछे-पीछे घसीटे जा रहे थे। आज के बड़े व्यक्तियों व नेताओं की विचित्र सी स्थिति है। वे अपना मत देने व हस्ताक्षर करने में इतनी शीघ्रता करते हैं कि कुछ कहते नहीं बनता। जहाँ दायित्व हो वहाँ गंभीरता, दूरदर्शिता और चिन्तन की सूक्ष्मता होनी चाहिए। कलकत्ता में इसके विपरीत उदाहरण मिले। 'मल-मूत्र प्रकरण' बहुत लम्बा-चौड़ा है। इसकी सारी क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं को लिखा जाए तो एक स्वतंत्र पुस्तक बन सकती है। यहाँ संक्षेप में उस पर दृष्टिपात कर लें।

इस प्रकरण का आरम्भ 'खादी-भण्डार' से होता है। वहाँ साध्वियां ठहरी हुई थीं। एक रात को दो साध्वियां 'परठने' के लिए गई। किसी कारणवश वे आगे नहीं जा सकीं और खादी-भण्डार के आस पास की सड़क पर उसे 'परठ' दिया। इसकी चर्चा हुई। आचार्य श्री तक यह बात पहुंची, आचार्य श्री ने इसकी पुनरावृत्ति न हो ऐसी व्यवस्था कर दी। जिन लोगों को जितना मतलब विरोध से था, उतना घटना की सचाई से नहीं था, वे प्रचार की इस कक्षा में उतर आए कि "आचार्य तुलसी के साधु-साध्वियों ने कलकत्ता महानगर की सड़कों को शौचालय बना लिया है। ये सड़कों पर मल-मूत्र फेंकते हैं। नगर में गंदगी फैलाते हैं, आदि।" इस प्रचार के उद्देश्य की गहराई में न जाना ही अच्छा है पर इसका संभावित स्थूल उद्देश्य यह था कि इसके द्वारा अणुव्रत-आन्दोलन और आचार्य श्री तुलसी के प्रति जन-मानस में घृणा भरी जाए। इस घृणा का आन्दोलन चलाने वालों ने कभी अपने लिये भी सोचा होगा ? अपनी अनैतिक गन्दगी के लिये भी कभी मन में घृणा की होगी ? खैर वे न भी सोचें और सच तो यह कि घृणा का आन्दोलन चलाने वालों को बहुत सोचना नहीं पड़ता। प्रेम का आन्दोलन चलाने वालों को पग-पग पर चिन्तन करना होता है। इसलिए आचार्य श्री ने कहा—"यदि मेरे यहाँ रहते जनता को कष्ट हो तो मुझे वहाँ से चले जाने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं होगी।

आचार्य श्री हेस्टिंग में प्रभुदयाल डाबड़ीवाल के 'प्रभु-निवास' में थे तब कुछ व्यक्ति इस प्रसंग को लेकर आए। आचार्य श्री ने संक्षेप में उन्हें बताया कि "फ्लश की टट्टियों का प्रयोग करना हमारी विधि के अनुकूल नहीं है। पर इतना मैं कह सकता हूँ कि वैसा कार्य हम नहीं करते, जिससे जनता को कष्ट हो।"

इस प्रसंग को लेकर कई पूंजीपति और समाजसेवी मिले। आचार्य श्री ने उनके सामने अपनी नीति स्पष्ट कर दी। फिर भी वह सिल-सिला चलता रहा। विरोध गंदगी का नहीं था, वह था आचार्य श्री की प्रगति का। जो सामने होता है वही सच नहीं होता। बहुधा होता यह है कि सच वह होता है जो सामने नहीं होता जो लोग विरोध की पृष्ठभूमि से परिचित

नहीं थे, वे उसे महत्त्व दे रहे थे। जो लोग उससे परिचित थे वे विरोध को दूसरी दृष्टि से देखते थे।

शेष-काल की यात्रा समाप्त कर आचार्य श्री अषाढ़-शुक्ला सप्तमी को चतुर्मास-प्रवास के लिए फिर बड़ा बाजार में आये। उसी प्रवचन-पण्डाल में स्वागत-भाषण हुए। वहाँ भागीरथजी कानोडिया और सीताराम जी सेकसरिया ने उस चर्चा को बार-बार उठाकर जन-मानस को क्षुब्ध बना दिया। आचार्य श्री ने अपने प्रवचन में कहा—"हम सडकों पर मल-मूत्र नहीं डालते, इस बात को मैं अनेक बार स्पष्ट कर चुका हूँ फिर भी कुछ लोग इस चर्चा को बढा रहे हैं, यह कोई अच्छी बात नहीं है।" इसकी प्रतिक्रिया उन पर हुई और फलस्वरूप उन्होंने वैसा किया।

प्रवचन समाप्त हुआ, आचार्य श्री प्रवचन-पण्डाल से महासभा भवन की ओर पधार गए। भागीरथजी और सीतारामजी पण्डाल से बाहर आ गए। वहाँ कुछ व्यक्तियों ने उनका हाथ पकड़ते हुए कहा—आप लोग गंदगी की बात करते हैं। पर जरा इधर दृष्टि डालिए। बड़ा बाजार के राजपथ किस प्रकार गंदे हो रहे हैं। आपको इसकी कोई चिन्ता नहीं है और साधुओं के द्वारा गन्दगी नहीं फैलाई जा रही है, उसके लिए आन्दोलन चलाया जा रहा है, यह क्यों? वहाँ वाचिक उत्तेजना अवश्य थी, पर मार-पीट का कोई प्रश्न ही नहीं था। उन्हें वह वाचिक उत्तेजना अप्रिय लगी और वे दोनों तत्काल आचार्य श्री के पास आए। सारी स्थिति रखी। आचार्य श्री ने उनसे पूछा—क्या आपको मारने-पीटने का किसी ने कोई यत्न किया? भागीरथी ने कहा—नहीं।

आचार्य श्री ने कहा—'हमारे श्रावकों द्वारा कोई भी असहिष्णुता पूर्ण व्यवहार होता है तो उसका दायित्व यत्किंचित मात्रा में हम पर आता है। मैं चाहता हूँ कि कोई भी श्रावक किसी भी व्यक्ति के साथ अशिष्ट व्यवहार न करे। अपने से भिन्न विचार रखने वालों के साथ अशिष्ट व्यवहार किया जाए, यह अहिंसा का मार्ग नहीं है। आचार्य श्री ने कहा श्रावकों के व्यवहार से इनका दिल दुःखा है तो उन्हें 'खमत-खामणा' कर लेना चाहिए। आचार्य श्री के उपदेश को सम्मान देते हुए उपस्थित श्रावकों

ने उनसे 'खमत-खामणा' किया। इस प्रकार बहुत ही मधुर वातावरण में उस घटना की परिसमाप्ति हुई।

इस घटना को लेकर विरोध करने वालों ने एक बवंडर खड़ा कर दिया। इसका प्रतिकार करने के लिए 'प्रतिवाद-सभा' का आयोजन किया। इसका सभापतित्व बंगाल राज्य के स्वायत्त मन्त्री ईश्वरदास जालान कर रहे थे। सभापति होने की स्वीकृति देने के पश्चात् उन्हें घटना की वास्तविकता का पता चला। मधुर वातावरण में घटना की समाप्ति हो गई। फिर भी उसके लिए प्रतिवाद-सभा का आयोजन किया गया है यह जानकर उन्हें आश्चर्य हुआ और उस सभा की कार्यवाही में प्रतिवाद नहीं हुआ, कुछ और ही हुआ। सम्भवतः आयोजकों ने उसे अपने पक्ष में हितकर नहीं माना।

युग बोलने वालों का है। जो बोलना जानते हैं, वे स्थल को जल और जल को स्थल बना डालते हैं। साधुओं के द्वारा कलकत्ता में गन्दगी बढ़ी या नहीं, इसका निर्णय कोई तीसरा व्यक्ति ही कर सकता है किन्तु इस गन्दगी के आन्दोलन ने जन-मानस को अवश्य ही एक बार भ्रम में डाल दिया। लोगों ने समाचार पत्रों में पढ़ा कि कलकत्ता के सम्भ्रान्त नागरिकों ने आचार्य श्री से इस घृणित-पद्धति को बन्द करने का अनुरोध किया है। उस वक्तव्य की भाषा यह है।

"In the course of a statement Mr. P. C. Sen, West Bengal Food Minister, Dr. Suniti Kumar Chatterjee, President, West Bengal Legislative Council., Mr. I. D. Jalan, Minister for Localself Government, West Bengal, Mr. B. K. Banerjee, Mayor of Calcutta, Dr. Kalidas Nag, Mr. Bijoy Singh Nahar, M. L. A. Mr. Sitaram Seksaria, Mr. Bhagirath Kanoria, Mr. P. D. Himatsingka, M. P., Mr. B. M. Singhi, Mr. K. P. Khaitan and others have urged upon Acharya. Sri Tulsi, sponsor of the Anuvrat Movement, to abandon the unhygienic' and unsocial practice of performing nature's Call in

open plots of lands instead of using latrines and urinals.

The Statement Reads as under :—

"It came as a disagreeable surprise to us that Acharya Tulsi, the sponsor of Anuvrat Movement, and the Sadhus and Sadhwis belonging to his Sect insist on performing nature's Call in the open either on public roads and lanes or on open plots of lands instead of using flush latrines and urinals. To do so is considered by them as an act of religious faith Such precepts and practice are, in our opinion, against the ordinary rules of Public health. The Practice of using open plots of land as latrines and throwing urine on streets or on open plots of land is most unhygienic and antisocial. It contaminates the air and spreads the diseases. It passes our comprehension that the Acharya, who always emphasises purity of thought and action of claims to preach high ideals of moral reconstruction of the individual and the Socity and exhort the people to accept new values of the present age, would insist on adhering to such unscientific and unhygienic practice. We imphatically feel that such precepts and practices follo-wed by the Sadhus undermine the religion instead of elevating it This would hinder the good work of Moral re-awakening which is Acharya Claims to do. In the present Scientiefic age when efforts are being made in every direction for having cleaner and more sanitry environment for healthier living and drainage facilities are contemplated to be extended even to the villages, this practice is really most irrational and cannot be a part of religion in any sense. We would therefore, urge upon the Acharya to abandon forthwith this unscientific, unhealthy and, therefore, anti-social practice."[1]

1—Hindustan standard Dated19July 1959

श्री पी० सी० सेन, डा० सुनीति कुमार चटर्जी, श्री ईश्वरदास जालान, श्री बी० के० बनर्जी, डा० कालीदास नाग, श्री विजय सिंह नाहर, श्री सीताराम सेकसरिया, श्री भागीरथ कानोड़िया, श्री प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका, श्री भंवरमल सिंघी, श्री के० पी० खेतान तथा अन्य नागरिकों ने आचार्य श्री तुलसी से अपील की है कि आचार्य तथा उनके साधुओं-साध्वियों द्वारा आम रास्तों पर मल-मूत्र त्याग करना हमारी राय में जन-स्वास्थ्य के साधारण नियमों के विरुद्ध एवं असाभाजिक कार्य है। आचार्य श्री तुलसी विचार एवं कार्य की शुद्धता पर जोर देते हैं और व्यक्ति तथा समाज के नैतिक पुनर्गठन का दावा करते हैं। जनता में इस बात का प्रचार करते हैं कि वह वर्तमान का मूल्य समझें। इस पर भी वे अवज्ञानिक और अस्वास्थकर परिपाटी पर जोर देते हैं। इस परिपाटी के रहते, नैतिक जागरण संभव नहीं हो सकता।'[1]

विरोधी प्रचार को बहुत बल मिला और उनके आशय की पुष्टि हुई। थोड़े दिनों के बाद ही लोगों ने उन्हीं लोगों के हस्ताक्षरों से समन्वित दूसरा संवाद पढ़ा। उसकी भाषा यह है—

समाचारपत्रों में शौचालय एवं मूत्रालय के रूप में सड़कों के तथाकथित व्यवहार के सम्बन्ध में वक्तव्य के छपने के उपरान्त हम लोग अणुव्रत-आन्दोलन-प्रवर्तक आचार्य श्री तुलसी से मिले और सारी बातों की जानकारी प्राप्त की। ऐसा मालूम होता है कि बहुत दिन पूर्व ऐसी एक दो घटनाएं हुई थीं जब सड़कों पर केवल मूत्र फेंके गए थे और जैसे ही आचार्य श्री का ध्यान उस ओर आकृष्ट किया गया, उन्होंने शीघ्र ही उचित व्यवस्था की। हम लोग अनुभव करते हैं कि अभी हाल में आचार्य श्री तुलसी के शिष्यों के विरुद्ध जो वक्तव्य निकाला गया है, वह सही नहीं है, आरोपित कार्यों के लिए साधु सड़कों का व्यवहार नहीं करते हैं। हम लोगों को यह जानकर प्रसन्नता है कि उन लोगों का ऐसा कोई

१—विश्वमित्र, कलकत्ता १९ जुलाई, १९५९

सैद्धान्तिक विश्वास नहीं है कि मलोत्सर्ग आदि के लिए सड़कों का व्यवहार किया जाए। अहिंसा को आधारसूत्र के रूप में पालन करते हुए वे इस बात के लिए सचेष्ट रहते हैं कि उनके द्वारा ऐसा कोई कार्य नहीं हो जो दूसरों के स्वास्थ्य के लिए हानिकर हो अथवा जिससे दूसरों की भावनाओं को चोट पहुँचे।

हस्ताक्षर—प्रफुल्लचन्द सेन, डा० सुनीतिकुमार चटर्जी, डा० कालिदास नाग, ईश्वरदास जालान।[१]

जनता को अपने नेताओं व बड़े लोगों के तत्कालीन मत-परिवर्तन पर आश्चर्य हुआ और वे नेता लोग उस घटना से विस्मित थे कि हमारे हस्ताक्षर किसी और शब्दावली पर लिए गए और उनका उपयोग किसी दूसरी शब्दावली पर किया गया। जब यही स्थिति उनके समक्ष रखी गई तो उन्होंने अपने सम्मान के प्रश्न को गौण करते हुए उसका प्रतिवाद किया।

इस 'मल मूत्र प्रकरण' के प्रसंग में कुछ युवकों ने दो दिन का अनशन भी किया। सैकड़ों स्थानों से अभिमत मंगवाए। वातावरण को विषाक्त बनाने के यथा सम्भव प्रयत्न किये गए। पर जो आशा थी वह शायद सफल नहीं हुई।

विरोध से अप्रिय वातावरण नहीं बनता उससे प्रिय परिस्थिति का भी निर्माण होता है। विरोध के समय जो संगठन होता है वह साधारण स्थिति में नहीं होता। अप्रिय परिस्थिति को एक बार सहना ही कठिन होता है। जो एक बार उसे सह लेता है उसके लिए वह अप्रिय नहीं रहती। विरोध मानसिक संतुलन की कसौटी है। विरोधी वातावरण को देख जो घबड़ा जाता है, वह पराजित हो जाता है और जो उससे घबड़ाता नहीं, वह उसे पराजित कर देता है। आचार्य श्री की वृत्तियाँ बहुत ही मृदु हैं। वे अनाग्रह की बात करने वालों में नहीं किन्तु उसे जीवन-व्यापी बनाने वालों में हैं। पर अनाग्रही होने का अर्थ यह नहीं है कि जो कोई विचार सामने आए, उसे स्वीकार कर लें। मल-मूत्र प्रकरण से

१—सन्मार्ग दैनिक, २६ जुलाई १९५९

सम्बन्धित कुछ व्यक्तियों ने यह सुझाव रखा कि आप शौच कार्य के लिए अपने स्थान में गड्ढे खुदवा लें। आचार्य श्री ने इसे स्वीकार नहीं किया। उस समय वहाँ स्थानकवासी सम्प्रदाय के मुनि सुशीलकुमार जी भी थे। उन्होंने इस सुझाव को स्वीकार कर लिया। इसके लिए उन्हें धन्यवाद देने को एक सभा का आयोजन किया गया।

वे लोग आचार्य श्री को आग्रही प्रमाणित करना चाहते थे। उनकी सुधार की आवाज में सत्य का आग्रह, हृदय का अनाग्रह दोनों नहीं थे। यह अनुभव केवल हमें ही नहीं, बहुतों को हो रहा था। कुछ व्यक्तियों के आग्रह में रस होता है। पर आग्रही कहलाना उन्हें अच्छा नहीं लगता, इसलिए वे अपने आग्रह पर अनाग्रह का झोल चढ़ा देते हैं। कुछ व्यक्ति रूढ़ि से मुक्त नहीं होते, या रूढ़िवादी कहलाना उन्हें अच्छा नहीं लगता, इसलिए वे रूढ़ि पर सुधार का झोल चढ़ा देते हैं। कलकत्ता के इस सुधारक-वर्ग की स्थिति लगभग ऐसी ही थी।

विरोध ज्योति से पूर्व होने वाला धुवाँ है। वह क्षण भर के लिए भले ही लोगों की आँखों को धूमिल बना दे पर अन्त में ज्योति जगमगा उठती है। वे व्यक्ति धुएं से कभी निराश नहीं होते, जिन्हें ज्योति की आशा होती है। धुएं के साथ दीप जलता ही रहा। कार्य रुका नहीं। आचार्य श्री ने अनेक बार इस तथ्य पर प्रकाश डाला कि अभी हमारे सामने दो प्रधान कार्य हैं—

१—साहित्य-साधना।
२—चरित्र-विकास।

यहाँ ये दोनों कार्य समुचित रूप से चल रहे हैं। विरोधी प्रवृत्तियों से अपना बचाव करने में कार्यकर्ताओं का ध्यान बढ़ा। चरित्र-विकास की भावना के प्रसार में कुछ बाधा आयी, जितना कार्य होना चाहिए था, उतना हुआ नहीं। फिर भी कार्य की गति रुकी नहीं। साहित्य का कार्य कलकत्ता में बहुत ही व्यवस्थित ढंग से हुआ। आठ मास का समय मिले, यह पहला सुयोग था। आज तक भी चातुर्मास से अधिक समय नहीं मिला था। पद-यात्रा के समय कार्य चलता है, पर बहुत सीमित। यहाँ यात्रा

का प्रसंग नहीं था, साहित्य की सुलभता थी, यह दूसरा सुयोग था। महासभा भवन और हेस्टिंग्स (प्रभुदयाल डाबड़ीवाल का मकान) ये स्थान भी इस का र्य के लिए बहुत उपयुक्त थे। शेष-काल में हम आठ-दस साधुओं को आचार्य श्री ने महासभा-भवन में रखा और चातुर्मास में हम छह साधु हेस्टिंग मे थे। साहित्य-कार्य के लिए हम एकान्त में थे और विशेष प्रसगों पर स्थान में भी। क्षेत्र की दूरी थी तीन मील और समय का व्यवधान था ५० मिनट। यह निकट और दूरी का, एकान्त और सह-प्रवास का एक विचित्र योग था। हम सप्ताह में एक दिन अवकाश रखते। उस दिन आचार्य श्री के दर्शनार्थ महासभा-भवन चले जाते और छह दिनों तक उसी कार्य में संलग्न रहते।

उत्तराध्ययन का कार्य लगभग समाप्त हो गया। दशवैकालिक का कार्य जो बाकी था, वह भी पूर्ण हो गया। द्विशताब्दी के लिए निर्धारित साहित्य का निर्माण भी सतोपपूर्ण हुआ। आचार्य श्री को भी संतोप था, हमें भी संतोप था और श्रावक-समाज को भी प्रसन्नता थी। सन्तोप साधक का गुण है। जो व्यक्ति हर किसी स्थिति में अपने को संतुष्ट रख सके वही साधक हो सकता है। विरोधी-वातावरण में हम अपने को संतुष्ट रखें यह हमारा गुण हो सकता है। किन्तु साहित्य-निर्माण जैसे कार्य मे हम सन्तोप मान लें, यह कोई गुण नहीं है। किन्तु हमें अपनी गति से सन्तोप था। हम अपने संकल्प के साथ चल पाए—यह था सन्तोप का विपय।

पन्नालाल जी सरावगी और शिवचन्दजी डाबड़ीवाल के प्रश्न पर आचार्य श्री ने कहा—"मैं कलकत्ता यात्रा को बहुत सफल मानता हूँ।" पूछा जा सकता है—सफलता क्या है? इसके समाधान से पहले उसे भी याद कर लें, तो कुछ व्यक्तियों का अभिमत है कि कलकत्ता यात्रा असफल रही। सफलता और असफलता इतनी स्थूल नहीं होती कि उनको हर कोई देख लें। सफलता क्या है? यह पूछा जा सकता है तो यह भी पूछा जा सकता है कि असफलता क्या है? विरोध हुआ वह यदि असफलता है तो हम इतिहास को देखें। विरोध कहाँ नहीं हुआ? बड़े

नगरों में आचार्य श्री गए हैं, वहाँ किसी-न-किसी रूप में विरोध हुआ है। उससे हमेशा हमने कुछ-न-कुछ सीखा ही है।

कलकत्ता आने से श्रावकों की श्रद्धा घटी है कुछ लोगों को यह कहते सुना। यह भी एक विचित्र बात है। श्रद्धा कोई रबड़ तो नहीं है, जो कलकत्ता या (बंगाल) जाने से घट जाए और राजस्थान जाने से पुनः बढ़ जाए। श्रद्धा साधुत्व के प्रति होती है। साधुत्व का पालन राजस्थान में होता है, बंगाल में नहीं होता, यह भावना इतिहास विषयक अज्ञान सूचक है। जैन-परम्परा के इतिहास को जानने वाला कोई भी विद्वान् यह नहीं कह सकता कि बंगाल में जाना साधु के लिए वर्जित है। श्रद्धा ज्ञान की परिपक्व दशा का नाम है। ज्ञान के अभाव में जो श्रद्धा होती है वह यथार्थ में श्रद्धा नहीं होती, किन्तु एक संस्कार गत रूढ़ि होती है। कलकत्ता जाने मात्र से श्रद्धा कम हुई है, यह माना जाए तो यह भी मानना होगा कि वह श्रद्धा थी ही नहीं। सच तो यह है कि समझदार लोगों की श्रद्धा इन सामयिक परिवर्तनों से नहीं डगमगाती। जो लोग परिवर्तन की परम्परा को नहीं जानते, वे छोटे-छोटे परिवर्तनों को सहन नहीं कर पाते। कुछ लोगों का सिद्धान्त से लगाव नहीं होता, उन्हें आलोचना प्रिय होती है। वे हर किसी विषय को उसकी सामग्री बना लेते हैं। कुछ लोग बेकार हैं। बेकारी में मनुष्य आलोचना के सिवाय और करे भी क्या! परिवर्तन के साथ आलोचना आती हैं। उसे असफलता नहीं माना जा सकता। सफलता की कहानी बहुत बड़ी है। विदाई-समारोह के अवसर पर महापौर (मेयर) ने जो कहा, उससे कलकत्ता का अंकन किया जा सकता है।

उन्होंने कहा—"कलकत्ता में अनेकों साधु मण्डलियाँ आती हैं, पर ऐसी साधु-मण्डली आज तक कलकत्ता में नहीं आयी। जो फैली हुई अशुद्ध वायु को विशुद्ध बना कर जन-जन का परिष्कार करते हैं और मैंने अगर किसी भी साधु संग को श्रद्धा की दृष्टि से देखा तो वह आचार्य श्री हैं जिनके संग में कवि, लेखक, साहित्यकार आदि विद्वान् भरे पड़े हैं। आपने यहाँ पर जो कार्य किया है—उसके लिए कलकत्ता ही नहीं, पश्चिम बंगाल भी युग-युग तक ऋणी रहेगा।"

दैनिक विश्वमित्र के सपादक कृष्णचन्द्र अग्रवाल ने महापौर के शब्दों को उद्धृत करते हुए कहा—कलकत्ता महापौर द्वारा आचार्य प्रवर के प्रति जो भावनाए अभिव्यक्त हुई है, वे तेरापन्थ-समाज के लिए गौरवपूर्ण हैं "आचार्य श्री से मेरा सम्पर्क कानपुर मे हुआ और उसके पश्चात् उस सम्पर्क का मैंने अपना अनुभव पत्र मे लिखा, जिसकी प्रतिक्रिया हुई और बाहर से मुझे पत्र मिले कि तुम पर इतना अच्छा प्रभाव कैसे पड़ा ? कलकत्ता मे आठ-नौ मास रहे है। यहाँ साधु-सन्यासियो का संग आता ही रहता है, पर अगर मेरी किंचित् भी श्रद्धा किसी भी साधु-संघ के प्रति हुई तो वह आचार्य श्री तुलसी के प्रति है। मेरे जीवन पर उनका बहुत बडा प्रभाव पडा है। मैंने जो उनमे विशेष गुण अनुभव किए है। वे क्षमाशील शिक्षित, आचारवान और सहिष्णुता व समन्वय जैसे महान गुणो के साक्षात् प्रतीक है। लोगों ने इनका मूल्य इतने बडे एक महान् सघ के साथ-आने से नहीं आका। अगर इनके साथ चार-पाच ही सन्त आते तो इनका ज्यादा महत्त्व आकते। जिनके साथ मे साहित्यकार, कवि, लेखक आदि विद्वान् सन्तो की कमी नहीं, ऐसे आचार्य श्री को विदा देते हर्ष नहीं खेद ही होता है। उनकी कीर्ति-पताका बनी रहे इसके लिए सभी को और विशेषकर उनके भक्तों को विशेष ध्यान रखना है। आचार्य श्री की मेवाड़ यात्रा सफल हो।

परिणाम में जो सुन्दर होता है वही वास्तव में सुन्दर होता है, विहार की वेला मे परिणाम-भद्रता का दर्शन हुआ। जनता ने देखा हजारों-हजारों मनुष्य गद्‌गद् थे। आगमन के समय जो अपार जन-समूह उमड़ा था, वह विहार के समय भी उसी रूप मे था, अधिक भी हो सकता है।

आचार्य श्री वडा बाजार से चार मील दूर स्थित न्यू सेन्ट्रल जूट मिल मे विराजे। वहाँ तक लगभग तीन, चार हजार स्त्री-पुरुष साथ आए।

आचार्य श्री ने उन्हें रमणीक रहने का सूत्र दिया। आपने कहा—"जैसे हमारे रहते हुए तुम रमणीक थे, वैसे ही हमारे चले जाने के बाद भी रमणीक रहना। यह रमणीकता क्या है ? आत्मोन्मुख वृत्ति जो है, वही रमणीयता है। आचार्य श्री के प्रवास ने कलकत्ता मे रमणीकता का वाता-

वरण निर्मित किया। आचार्य श्री ने अपने विदाई-संदेश में कहा था कि "जितना कार्य होना चाहिए था, उतना नहीं हो सका।"

आचार्य श्री विहार करते हुए महात्मा गाँधी रोड आए। एक व्यक्ति आया और आचार्य श्री के सामने खड़ा हो कहने लगा आचार्य श्री! आपने कहा—कार्य कम हुआ है पर मैं कहता हूँ कार्य बहुत हुआ है। आप लाखों जैनेतर लोगों के हृदय पर अमिट छाप छोड़ कर जा रहे हैं। आप की उदार वृत्ति और समभावी धर्म की व्याख्या ने हम सबको बहुत ही प्रभावित किया है। हमने देखा मूक भाषा में ऐसे उद्‌गार हजारों लोग व्यक्त कर रहे थे। कोई भी आकृति-विशारद इन भावों को सहज ही पढ़ सकता था। चतुर्मास की समाप्ति के लगभग भागीरथ जी कानोड़िया आए और उन्होंने जो उद्‌गार व्यक्त किये वे बहुत ही सद्‌भावना के सूचक थे। उन्होंने वार्त्तालाप के प्रसंग में कहा—हमारी कोई दुर्भावना नहीं थी। हम तो केवल आपसे निवेदन करना चाहते थे। कुछ अनचाहा वातावरण बन गया। अब उसकी विस्मृति हो जानी चाहिए।

आचार्य श्री ने कहा—निवेदन करना अनुचित नहीं है। पर उसका तरीका जो अपनाया गया वह मेरी दृष्टि में उचित नहीं था। वार्त्तालाप में केवल सौहार्द ही नहीं था, हृदय परिवर्त्तन की स्पष्ट झलक भी थी। रमणीय वही होता है, जो पद-पद पर नया बने। कलकत्ता का वातावरण इसलिए रमणीय रहा कि उसमें नयापन है। अणुव्रत-आन्दोलन के विकास के लिए महीनों तक चिन्तन चला, अनेक विचारकों ने अपने मूल्यवान विचार प्रस्तुत किए, वह अपने ढङ्ग का नया कार्य था।

समाज नया मोड़ ले, इस पर भी विचार-विमर्श हुआ। आज का समाज इसलिए रमणीय नहीं है कि रूढ़ियों से चिपका हुआ है। रूढ़ि कोई बुराई नहीं है। पर वह रूढ़ि जिसकी उपयोगिता समाप्त हो जाए, बुराई बन जाती है। समाज में ऐसी अनेक रूढ़ियाँ हैं, इनके द्वारा चरित्र-विकास संभव नहीं। इसलिए यह सहज अपेक्षा है कि समाज नया मोड़ ले।

द्विशताब्दी के लिए चिन्तन चला। उसकी व्यवस्थित कार्य-पद्धति क

निश्चय हुआ। उसकी भावी रूप-रेखा और कार्यक्रम भी निश्चित हुए। जैन-दर्शन के विषय में भी अनेक महत्त्वपूर्ण वार्तालाप हुए और अनेक नए तथ्यों को जानकारी मिली। जनता की जिज्ञासाओं को जानने का अवसर मिला।

राधाविनोद पाल, कालीदास नाग, और सुनीतिकुमार चटर्जी आदि अनेक विद्वान जैन-दर्शन के प्रति आकृष्ट हैं। वे कलकत्ता में जैन-दर्शन का विशाल शिक्षण-केन्द्र देखने को इच्छुक हैं। उन्होने कहा आपके कलकत्ता आगमन के उपक्षल मे स्थायी स्मृति रहे वैसा कोई कार्य होना चाहिए।

कलकत्ता में जैन लोग बडी संख्या में रहते है। अहमदाबाद, बम्बई, कलकत्ता और दिल्ली इन चारों नगरों में जैन बडी संख्या में रहते है। पर वहाँ जैन दर्शन के शिक्षण की कोई समुचित व्यवस्था नहीं है। जैनों का ऐसा कोई पुस्तकालय नहीं है जहाँ हर समय जैन-साहित्य उपलब्ध हो सके। वर्तमान युग अन्वेषण या अनुसन्धान का युग है। आज प्रत्येक विषय पर छानबीन हो रही है। जैन-साहित्य में प्रचुर सामग्री है। उसका यथेष्ट रूप से अन्वेषण हो तो अनेक नए तथ्य सामने आ सकते है। अन्वेषण के क्षेत्र मे वर्त्तमान मानस भी उदार है। समन्वय या खोज की शुद्ध-बुद्धि भी आज यथेष्ट है। अनेक व्यक्ति जैन-दर्शन पर अनुसन्धान करने की इच्छा रखते है। पर साधन-सामग्री के अभाव मे वे अपनी इच्छा को क्रियान्वित नहीं कर सकते।

अभी-अभी हिन्दी-साहित्य के सुलेखक श्री रामवृक्ष बेनीपुर ने जो जैन समाज को भारी उपालम्भ दिए हैं, वह चौंका देने वाला है। "भगवान् महावीर के बारे में मैं जानूँ और कुछ ललित साहित्य दूँ कि उनके प्रति लोगों मे उत्कण्ठा एवं श्रद्धा उत्पन्न हो, ऐसी भावना मेरे मन में बार-बार जगती है। कई जैनी मित्रों से मैंने इस की चर्चा भी की है किन्तु इसका उपयुक्त साहित्य में प्राप्त नहीं कर सका, जो साहित्य मिला, वह इतना पेचीदा, उलझन पूर्ण, साम्प्रदायिक और दार्शनिक बारीकियों से भरा है कि उनके आधार पर भगवान महावीर के जीवन पर कोई अच्छी कला-कृति देना भी परम कठिन है। उनके सिद्धातों

को जनता तक पहुँचाने के लिए सरल भाषा और सरल शैली में साहित्य-रचना करना तो दूर की बात रही।"

धर्म-प्रचारकों में सर्व प्रथम भगवान् महावीर ही रहे, जिन्होंने जनता की भाषा को अपनाया। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं कि उनके उप-देश अभी तक ऐसी भाषा में नहीं आ पाये कि साधारण जनता उन्हें आसानी से हृदयंगम कर सके। विद्वत्तापूर्ण अनुसंधान समन्वित महाग्रंथ निकले, मैं इसके विपक्ष में नहीं हूँ, किन्तु मैं इस बात के पक्ष में हूँ कि अधिक ध्यान ऐसी ही पुस्तकों पर दिया जाए जिसकी भाषा सरल हो, और जो सुलभ हो कम मूल्य में, साधारण जनता को प्राप्त हो सके।

जैन धर्म के अनुयायियों में धनिकों की कमी नहीं, अतः एक ऐसी प्रका-शन-संस्था की स्थापना की जाए जहाँ से भगवान् महावीर के जीवन और दर्शन पर सस्ती से सस्ती पुस्तकें साधारण जनोचित भाषा में प्रकाशित की जांए। ऐसा करके हम साधारण जनता को कोटि-कोटि कण्ठों से भगवान् महावीर की जय का नारा स्वाभाविक उल्लास के स्वर में सुना सकेंगे।[१]

वैदिक व बौद्ध साहित्य पर जो अनुसन्धान कार्य हुआ है उसका कारण साधनों की सुलभता है। आज से पच्चास वर्ष पूर्व पाली टैक्स सोसा-इटी ने बौद्ध साहित्य प्रकाशित किया। इसलिए वह कार्य आज बहुत आगे बढ़ गया। प्राकृत साहित्य अब भी सुसंपादित नहीं है। जैन-साहित्य को अभी तक राइस डेविड (पति-पत्नी) जैसा कोई सेवक नहीं मिला है। अभी इन्हीं वर्षों में प्राकृत टैक्स, सोसाइटी की स्थापना हुई है। राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद की इसमें बहुत रुचि है। केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकार इसमें सहयोग देती है। किन्तु जैन विद्वानों को अभी भी इसमें विशेष रुचि नहीं है। जैन दर्शन के शिक्षण व अनुसन्धान की एकमात्र आधुनिक संस्था है—वैशाली-विद्यापीठ। यह बिहार सरकार द्वारा संचालित है। यहाँ प्राकृत और जैन साहित्य का स्वतंत्र अध्ययन कराया जाता है और स्नातकोत्तर-विद्यार्थी रिसर्च भी करते हैं। जैन विद्यार्थी यहाँ भी बहुत

१—जैनभारती १६ अगस्त १९५९ वर्ष ७, अंक ३३

कम है। व्यापारी को जितना प्रेम, व्यापार या धन से होता है उतना शायद और किसी से नहीं होता। जैन-साहित्य की महान् निधि आज व्यापारी जाति के हाथ में है। यह भविष्य के गर्भ में है कि उससे उसकी सुरक्षा होगी या और। कलकत्ता के विद्वान इस महान दर्शन और साहित्य की सुरक्षा ही नहीं, विस्तार चाहते हैं—यह हमें अनुभव हुआ।

विद्वान बौद्ध भिक्षु जगदीश काश्यप ने बनारस में सुझाया था कि उत्तराध्ययन के कुछ अध्ययनों का सिहली, बर्मी आदि कई लिपियों में सपादन किया जाना चाहिए। जिससे बौद्ध भिक्षुओं को अपने समान दूसरी महान् श्रमण-परम्परा का परिचय मिले। वे अभी जानते तक नहीं हैं इस कार्य में मैं अपनी सेवाएं भी देने को प्रस्तुत हूं। अहिंसा-दिवस पर वे कलकत्ता आये तो उन्होंने फिर सुझाया। कि दशवैकालिक और उत्तराध्ययन के गुटके प्रकाशित होने चाहिए। धम्मपद के गुटके प्रकाशित हुए, उससे बहुत प्रचार हुआ है।

चीनी भवन (शांति-निकेतन) के हाल में प्रो० तानयुनशान ने वेदना भरे स्वर में कहा था कि जैन-दर्शन के महान् साहित्य का बौद्ध देशों में प्रचार नहीं होता है, इसका मुझे बहुत दुःख है। अब यह होना चाहिए। इसके लिए मैं जो कर सकता हूँ करने को प्रस्तुत हूँ।

हमने जर्मन विद्वान् डा० रोथ को वहाँ खोजा। फिर जर्मन महा वाणिज्य के कार्यालय से पता चला कि वह अब जर्मनी में है, उसके स्थान पर जो दूसरे विद्वान् थे, वे मिले। और भी अनेक विदेशी व्यक्ति सम्पर्क में आए। आश्विन शुक्ल पूर्णिमा से अणुव्रत-आन्दोलन का दशवां वार्षिक अधिवेशन शुरू हुआ। इस बार आन्तरिक कार्य अच्छा हुआ।

अ० भा० अणुव्रत समिति के अध्यक्ष सुगनचन्द जी आँचलिया के चुनाव ने दर्शकों को विस्मय में डाल दिया। दिल्ली राज्य जन-सम्पर्क समिति के अध्यक्ष गोपीनाथ अमन ने कहा—यह हम राजनायिकों के लिए बोद्ध- पाठ है। जहाँ सत्ता और अधिकार के लिए लोग लड़ रहे हैं, वहाँ अधिकार पानेवाला स्वीकार न करे और दूसरे लोग उसी व्यक्ति को अधिकार देना चाहें, यह बहुत प्रभावशाली कार्य है। ऐसा कार्य अणुव्रत-

आन्दोलन जैसें चारित्रिक आन्दोलनों की परिधि में ही देखने को मिल सकता है।

कार्तिक शुक्ला अष्टमी को ५ दीक्षाएँ सम्पन्न हुईं। बड़े नगर में प्रायः कुछ-न-कुछ विरोध होता है। पर यहाँ विरोध पहले ही सीमा पार कर चुका था। इसलिए दीक्षा के अवसर पर वह नहीं हुआ। इसे हम हमारे इतिहास की आश्चर्यजनक घटना कह सकते हैं।

दीक्षा का स्थान ४३ चौरंगी रोड निश्चित हुआ। स्थान बहुत सुन्दर था। कलाकारों के लिए बंगाल सरकार ने वह पण्डाल बनाया था। स्थान बड़ा भी था। पर स्थान छोटा बड़ा नहीं होता। जनता छोटे स्थान को बड़ा और बड़े स्थान को छोटा बना देती है। जनता उमड़ पड़ी। दीक्षा-संस्कार देखने की उत्सुकता थी। भीड़ को सम्भालना कठिन हो गया। लगभग एक घण्टा जनता को बिठाने में लगा फिर भी कोलाहल शांत नहीं हुआ। हजारों लोग वापस चले गए। अनेक विशिष्ट व्यक्ति व आमंत्रित व्यक्ति स्थान के भीतर पहुँच ही नहीं पाये। केन्द्रीय मंत्री, विधि मंत्री, अशोककुमार सेन आदि कई व्यक्ति कठिनाई से पहुँचे, पर वे अधिक समय तक खड़े नहीं रह सके। पण्डाल-जनता के दबाव से खींचा जा रहा था। स्थिति जटिल बन गई। स्थान के अधिकारी चिंतित हो रहे थे। तत्काल सूझा कि दीक्षा का स्थान बदला जाए। आचार्य श्री ने चंपालालजी स्वामी को दूसरे स्थान की खोज के लिए कहा। वे गए और स्थान की व्यवस्था कर दी। जनता को वहाँ से निकालना भी कठिन हो रहा था। व्यक्तियों के कुचले जाने का बहुत भय था। धीरे-धीरे लोगों को बताया गया और स्थान परिवर्तन कर दिया। वहाँ के अधिकारी उप-मंत्री ने बताया कि आचार्य श्री ने ठीक समय पर निर्णय कर बहुतों को उबार लिया है। यदि आध घण्टा और विलम्ब होता तो कोई अवांछनीय घटना घट जाती या तो पण्डाल गिर पड़ता या बिजली से जल उठता। पर आचार्य श्री ने संकट को टाल दिया।

जनता में दीक्षा देखने की उमंग थी वह पूरी नहीं हो सकी अः

आचार्य श्री स्थानीय नागरिकों को जैन-दीक्षा का परिचय देना चाहते थे, वह नहीं दिया जा सका।

दीक्षार्थियों में चार बहिनें थीं और एक भाई। इनमें एक दीक्षा दिल्ली की थी। वह बहिन राष्ट्रपति का आशीर्वाद लेने गई। उससे बातचीत कर वे प्रसन्न हुए और उन्होंने आशीर्वाद भी दिया।

तेरापंथ सौभाग्यशाली संघ है। उसका विस्तार मूल भित्ति के आधार पर ही रहा है। विस्तार वही तेरापंथ के आचार्य और पोषक इस सत्य से अपरिचित नहीं रहे हैं।

आज के युग का भाग्य-विधान समाचार पत्रों के हाथ में है। क्षोभ और शांति दोनों में उनका हाथ है। कलकत्ता में विविध-भाषाओं के अनेक पत्र प्रकाशित होते हैं। अणुव्रत-आन्दोलन के प्रसार में प्रायः सभी पत्र सहयोग दे रहे थे। विश्वबन्धु के सिवा दूसरे किसी भी पत्र से विरोधी-वातावरण को प्रोत्साहन नहीं मिल रहा था।

विरोधी लोगों का विश्वास था कि आचार्य श्री के श्रावकों ने पत्रकारों को अपने पक्ष में रखने के लिए लाखों रुपये बहाए हैं। जब उन्हें बताया कि रुपये देकर पत्रों का सहयोग प्राप्त नहीं किया गया। वह प्राप्त किया गया है—सद्भावना, मैत्री और आन्दोलन की वास्तविकता के आधार पर। यह जानकारी सचमुच उन्हें आश्चर्य में डालने वाली थी। पत्रकारों पर विरोधी लोगों ने बहुत दबाव डाला। वे प्रभावशाली थे। उनका संपादकों से चिर परिचय भी था। फिर भी वे पत्रों के द्वारा विरोधी वातावरण को को उग्र बनाने में सफल नहीं हुए। पत्रकारों से सम्पर्क बनाए रखने में शोभाचन्द सुराना ने विशेष प्रयत्न किया।

कलकत्ता यात्रा को विशेष लाभप्रद बनाने के लिए सभी श्रावककृत-संकल्प थे। सबने यथाशक्ति प्रयत्न भी किया। जिनकी शक्ति अधिक थी वे अधिक आहुति दे पाए कम शक्ति वाले कम दे पाए। पर इस महायज्ञ में यथाशक्ति सभी ने आहुति दी। व्यक्ति की विशेषता भिन्न-भिन्न होती है। किसी में बुद्धि-बल होता है, किसी में कार्यबल। किसी के पास धन का बल होता है और किसी के पास जन-बल। जो व्यक्ति जिस क्षमता का

होता है वह उसी के अनुरूप कार्य कर सकता है। एक व्यक्ति में सारी विशेषताएं नहीं होती और सारे व्यक्तियों से एक ही कार्य नहीं लिया जा सकता। जो व्यक्ति जिस क्षमता का होता है, उसी के अनुरूप कार्य कराया जा सकता है। यह आवश्यक नहीं कि जो जितना धार्मिक हो, वह उतना ही विचारक हो अथवा जो जितना विचारक हो वह उतना ही धार्मिक हो। धार्मिक से जो कार्य लिया जा सकता है, वह उससे लेना चाहिए और जो कार्य विचारक से लिया जाना चाहिए, वह उसे लेना चाहिए। समाज में सभी प्रकार के लोग हैं और धर्म-शासन के लिए सभी अपनी-अपनी सेवाएँ देने को प्रस्तुत हैं और दी हैं। प्रभुदयाल डाबड़ीवाल और पन्नालाल सरावगी के नाम इस प्रसंग में विशेष उल्लेखनीय हैं। उन्होंने सारी शक्ति लगाकर चातुर्मास में होनेवाली सफलताओं में प्रमुख भाग लिया था।

तेरापन्थ की संगठन शक्ति से सभी लोग प्रभावित हैं। प्रतिदिन व्याख्यान में जो परिषद होती थी, वह दर्शकों के लिए आश्चर्यजनक घटना है। लगातार आठ महीनों तक छह-सात हजार व्यक्ति प्रभात कालीन प्रवचन में हों, यह कम बात नहीं है। व्यापारिक केन्द्र में ऐसा नहीं लगा कि हमारे श्रावक व्यापार की प्रमुखता और आचार्य श्री के प्रवास को गौणता दे रहे हों।

सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए तो यह चातुर्मास बहुत ही महत्वपूर्ण रहा और आचार्य श्री का कलकत्ता प्रवास बहुत सफल रहा। सफलता का हेतु है संवीय—संपदा और आचार्य श्री का संकल्प। जिसका संकल्प फलवान् होता है, उसे बल मिलता है, किन्तु फल उसी को मिलता है, जिसका संकल्प बलवान् हो।

कलकत्ता से सरदार शहर

सरदारशहर कलकत्ता से १०८८ मील की दूरी पर है। कुछ घूमघाम आए, इसलिए लगभग १३ सौ मील चले। वायुयान के युग में यह लगभग ५, ६ घण्टा की यात्रा है। पर आचार्य श्री जैन मुनि जो ठहरे। सवारी और जैन मुनि का क्या सम्बन्ध ? पाद-विहार उनका जीवन-व्रत है।

आचार्य श्री मृगसिर वदी १ को कलकत्ता से चले और फाल्गुन वदी ४ को सरदारशहर पहुंचे।

आचार्य श्री जहाँ पधारे वहाँ लोगों ने कुछ ठहरने का आग्रह किया पर अभी तो 'चरन् वै मधु विन्दते' की ज्योत जल रही थी। कोई भी प्रगतिशील व्यक्ति लक्ष्य की दूरी को सहन नहीं कर सकता। इस यात्रा का प्रधान लक्ष्य था द्विशताब्दी-समारोह के लिए मेवाड़ जाना, दूसरा लक्ष्य था—सरदारशहर। द्विशताब्दी का प्रारम्भ आषाढ़ी पूर्णिमा से हो रहा है। वर्तमान प्रगति सरदारशहर के लिए थी। वहाँ मंत्री मुनि स्थिरवास किए हुए थे। मुनि श्री सुखलालजी घोर तप तप रहे थे। माघ वदी १४ को वे आजीवन अनशन कर रहे थे। वे आचार्य श्री का दर्शन चाहते थे। इस चाह ने गति को प्रगति में बदल दिया। मैंने एक दिन आचार्य श्री से निवेदन किया कि अब हम प्रगति के पथ पर है। गति का अभ्यास परिपक्व हो गया है। एक समय था, जब ५ मील चलते तो बहुत चले, माना जाता वह सात मील चलना तो पहाड़ सा लगता। आज पन्द्रह सोलह मील चलना साधारण बात है। इससे अधिक चलने पर विहार अधिक हुआ लगता है।

व्यास ने कहा – आलस्य, मैथुन, निद्रा, भूख और क्रोध जैसे-जैसे सेवन किया जाता है वैसे-वैसे वे बढ़ते है। पाद-विहार भी अभ्यास से बढ़ता है। यह अनुभूति शायद उस समय स्पष्ट नहीं हुई होगी। आज यह बहुत स्पष्ट है। एक आचार्य ने लिखा है—पंथ समा नात्थि जरा—चलने के समान कोई बुढ़ापा नहीं है। इसमें सचाई नहीं है, यह तो नहीं कहा जा सकता, पर सचाई का मार्ग एक ही नहीं है। यह भी एक सचाई है कि उल्लासपूर्ण पाद-विहार नव यौवन भी ला सकता है। बीस-बीस मील के पाद विहार के उपरात भी आचार्य श्री पहर रात तक प्रवचन करते तब 'चलना बुढापा है' इसकी सचाई कैसी माधी जा सकती थी। जहाँ उल्लास अठखेलिया करे 'वहाँ बुढ़ापा कैसे आए ? वह युवा भी बूढ़ा होता है जिसमें उल्लास नहीं होता। 'पेंडा भलो न कोस को—चलना एक कोस का भी अच्छा नहीं है, यह जिसने कहा वह युवक नहीं था। युवक वह था,

जिसने कहा—'चरैवेति-चरैवेति—चलते चलो चलते चलो'। आचार्य श्री ने स्वयं ही प्रगति नहीं की, उन्होंने दूसरों को भी प्रगति की ओर अग्रसर किया। जीवन-शोधन के प्रति जो गति है, उससे अधिक और प्रगति क्या हो सकती है। आचार्य श्री की यात्रा और प्रवास दोनों का लक्ष्य है प्रगति। आचार्य श्री बहुधा कहा करते, जो काम मुझे कहीं रह कर करना है वही यात्रा में करना है। एक जैन मुनि के लिये जीवन ही यात्रा है। जो जीवन में करना हैं जीवन के लिये करना है वही यात्रा में करना है।

यात्रा सचमुच सुखद स्मृतियों का संग्रह होता है। जहाँ नित नये लोग मिलते हैं, नित नये गाँव और नित नई भूमि का स्पर्श होता है नवीनता से बढ़कर और क्या रमणीय होगा। पद-पद पर जो नवीन हो, वही रमणीय है, यह कवि वाणी असत्य नहीं है। जो रमणीय होता है, वह शिव भी होता है। जो शिव न हो, कल्याणकारी न हो वह पल भर रमणीय भले लगे पर वास्तव में रमणीय नहीं होता। पग-पग पर सत्य की अनुभूतियाँ हुईं, उसका साक्षात् मिला, इसीलिये यात्रा कल्याणकर थी, जहाँ सत्य भी हो, कल्याण भी हो और रमणीय भी हो, वहाँ आनन्द होगा ही, भले फिर कष्ट हो या आराम हो। यात्रा में कष्ट होता है, यह बहुत स्पष्ट है। पर साध्य की गहराई में वह क्षीण हो जाता है; लक्ष्यहीन जीवन इसलिए बुरा होता है कि उसमें कष्ट उबल पड़ते हैं। प्रधान लक्ष्य एक ही होता है। एक में अनेक और अनेक में एक को ढूंढा जाए, यही है स्याद्वाद् का मंत्र। वर्धमान तक हम गमनागमन कर रहे थे, जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में चले जा रहे थे। यह सही भी है लक्ष्य बदले बिना दिशा परिवर्तन नहीं होता। सम्मेदशिखर, धनवाद, झरिया और कोडरमा की ओर जाना निश्चित हुआ। पथ बदल गया। पथ ही नहीं बदला, धारणाएं भी बदलीं। हिन्दुस्तान की प्रगति बातों में हो रही है, यह धारणा हिली। दामोदर घाटी योजना के बांध, बिजली और सिंचाई के साधनों और विशाल कारखानों को देख लगा कि प्रगति अभी गर्भ में है। उसकी आलोचना भी मिथ्यावाद नहीं है और उसका समर्थन भी मिथ्यावाद नहीं है।

आचार्य श्री मृगसिर वदी १ को कलकत्ता से चले और फाल्गुन वदी ४ को सरदारशहर पहुंचे।

आचार्य श्री जहाँ पधारे वहाँ लोगों ने कुछ ठहरने का आग्रह किया पर अभी तो 'चरन् वै मधु विन्दते' की ज्योत जल रही थी। कोई भी प्रगतिशील व्यक्ति लक्ष्य की दूरी को सहन नहीं कर सकता। इस यात्रा का प्रधान लक्ष्य था द्विशताब्दी-समारोह के लिए मेवाड़ जाना, दूसरा लक्ष्य था—सरदारशहर। द्विशताब्दी का प्रारम्भ आषाढ़ी पूर्णिमा से हो रहा है। वर्तमान प्रगति सरदारशहर के लिए थी। वहाँ मंत्री मुनि स्थिरवास किए हुए थे। मुनि श्री सुखलालजी घोर तप तप रहे थे। माघ वदी १४ को वे आजीवन अनशन कर रहे थे। वे आचार्य श्री का दर्शन चाहते थे। इस चाह ने गति को प्रगति में बदल दिया। मैंने एक दिन आचार्य श्री से निवेदन किया कि अब हम प्रगति के पथ पर है। गति का अभ्यास परिपक्व हो गया है। एक समय था, जब ५ मील चलते तो बहुत चले, माना जाता छह सात मील चलना तो पहाड़ सा लगता। आज पन्द्रह सोलह मील चलना साधारण बात है। इससे अधिक चलने पर विहार अधिक हुआ लगता है।

व्यास ने कहा—आलस्य, मैथुन, निद्रा, भूख और क्रोध जैसे-जैसे सेवन किया जाता है वैसे-वैसे वे बढ़ते हैं। पाद-विहार भी अभ्यास से बढ़ता है। यह अनुभूति शायद उस समय स्पष्ट नहीं हुई होगी। आज यह बहुत स्पष्ट है। एक आचार्य ने लिखा है—पंथ समा नात्थि जरा—चलने के समान कोई बुढ़ापा नहीं है। इसमें सचाई नहीं है, यह तो नहीं कहा जा सकता, पर सचाई का मार्ग एक ही नहीं है। यह भी एक सचाई है कि उल्लासपूर्ण पाद-विहार नव यौवन भी ला सकता है। बीस-बीस मील के पाद विहार के उपरात भी आचार्य श्री पहर रात तक प्रवचन करते तब 'चलना बुढ़ापा है' इसकी सचाई कैसी साधी जा सकती थी। जहाँ उल्लास अठखेलियां करे वहाँ बुढ़ापा कैसे आए? घर युवा भी बूढ़ा होता है जिसमें उल्लास नहीं होता। 'पेंडा भलो न कोस को—चलना एक कोस का भी अच्छा नहीं है, यह जिसने कहा वह युवक नहीं था। युवक वह था,

जिसने कहा—'चरैवेति-चरैवेति—चलते चलो चलते चलो'। आचार्य श्री ने स्वयं ही प्रगति नहीं की, उन्होंने दूसरों को भी प्रगति की ओर अग्रसर किया। जीवन-शोधन के प्रति जो गति है, उससे अधिक और प्रगति क्या हो सकती है। आचार्य श्री की यात्रा और प्रयास दोनों का लक्ष्य है प्रगति। आचार्य श्री बहुधा कहा करते, जो काम मुझे कहीं रह कर करना है वही यात्रा में करना है। एक जैन मुनि के लिये जीवन ही यात्रा है। जो जीवन में करना है जीवन के लिये करना है वही यात्रा में करना है।

यात्रा सचमुच सुखद स्मृतियों का संग्रह होता है। जहाँ नित नये लोग मिलते हैं, नित नये गाँव और नित नई भूमि का स्पर्श होता है नवीनता से बढ़कर और क्या रमणीय होगा। पद-पद पर जो नवीन हो, वही रमणीय है, यह कवि वाणी असत्य नहीं है। जो रमणीय होता है, वह शिव भी होता है। जो शिव न हो, कल्याणकारी न हो वह पल भर रमणीय भले लगे पर वास्तव में रमणीय नहीं होता। पग-पग पर सत्य की अनुभूतियाँ हुईं, उसका साक्षात् मिला, इसीलिये यात्रा कल्याणकर थी, जहाँ सत्य भी हो, कल्याण भी हो और रमणीय भी हो, वहाँ आनन्द होगा ही, भले फिर कष्ट हो या आराम हो। यात्रा में कष्ट होता है, यह बहुत स्पष्ट है। पर साध्य की गहराई में वह क्षीण हो जाता है; लक्ष्यहीन जीवन इसलिए बुरा होता है कि उसमें कष्ट उथल पड़ते हैं। प्रधान लक्ष्य एक ही होता है। एक में अनेक और अनेक में एक को ढूंढा जाए, यही है स्याद्वाद का मंत्र। वर्धमान तक हम गमनागमन कर रहे थे, जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में चले जा रहे थे। यह सही भी है लक्ष्य बदले बिना दिशा परिवर्तन नहीं होता। सम्मेदशिखर, धनबाद, झरिया और कोडरमा की ओर जाना निश्चित हुआ। पथ बदल गया। पथ ही नहीं बदला, धारणाएं भी बदलीं। हिन्दुस्तान की प्रगति बातों में हो रही है, यह धारणा हिली। दामोदर घाटी योजना के बांध, बिजली और सिंचाई के साधनों और विशाल कारखानों को देख लगा कि प्रगति अभी गर्भ में है। उसकी आलोचना भी मिथ्यावाद नहीं है और उसका समर्थन भी मिथ्यावाद नहीं है।

भावना का बल दूरी को कम कर देता है। वहाँ की जन भावना अत्यन्त प्रबल थी। आचार्य श्री को आखिर वहाँ जाने का निश्चय करना पड़ा। वह अभ्रक उद्योग का प्रमुख क्षेत्र है। वहाँ जाने का आकर्षण सबमें था। साधु-साध्वीगण और यात्री-गण का स्वर भी कोडरमा की जनता के साथ था। वरही से कोडरमा को जो एक सड़क जाती है, वह अत्यन्त मनोरम है। पर्वतमाला और बाँध की परिक्रमा करते-करते पथिक उल्लास से भर जाता है।

आचार्य श्री का व्यक्तित्व सम्प्रदाय की सीमा से आगे प्रसार पा चुका है। जैन और अजैन सभी व्यक्ति उन्हें अपना मान उनसे कुछ सीखने का यत्न करते हैं। एक दिन का प्रवास पर्याप्त नहीं हुआ। न आने की अपेक्षा आना अच्छा है - इस बुद्धि से लोगों ने सन्तोष माना।

आचार्य श्री विहार कर गए। पीछे से एक दुर्घटना हुई। लाडनू का एक व्यक्ति यात्रा में साथ था। उसका नाम था मालचन्द सुतोड़िया। वह बोल व सुन नहीं सकता। रेल की पटरी को पार कर रहा था इतने में रेल आ गई और वह कट गया। यह एक मार्मिक घटना घटी।

कोडरमा से विहार कर एक छोटे-से गाँव में गए। घर दो-चार थे, पर ग्रामीण लोगों ने बहुत ही प्रेम दिखाया। वहाँ से आगे चले। खेतों की पगडंडियों से गुजरे। पथ निर्देशक साथ में थे। सुगनचन्दजी आँचलिया और डालचन्दजी बरड़िया इस ओर से उस ओर तक चक्कर लगा रहे थे। पथ-यात्रा के लिए पथ-दर्शक की आवश्यकता होती है। वे लोग बड़े विचित्र हैं जो जीवन-यात्रा के लिए पथ-दर्शक की आवश्यकता का अनुभव नहीं करते। पगडंडियों के जाल को पार कर सांझ होते-होते हम चौपारन पहुँचे। बाइस मील का पाद-विहार और मार्ग की विषमता ये थकान को अधिक बल दे रहे थे। आचार्य श्री ने जी० टी० रोड पर पहुँच सारी स्थिति का आकलन करते हुए कहा—

कोडरमा रो कोड़, संगला रो पूरो हुओ।
रास्ता रो झकझोड़, मुश्किल स्यूँ जी० टी० मिली॥

मृगसिर शुक्ला छठ को निमियाघाट से हम सम्मेदशिखर पर चढ़े।

आगे-आगे आचार्यप्रवर थे। पीछे-पीछे साधु, श्रावक, श्राविका और साध्वियों का समुदाय चल रहा था। पहाड़ की चढाई थी जवान बूढ़े बन रहे थे। लाठियाँ की लाठियाँ चल रहीं थीं। सघन झाड़ियों के बीच में से एक संकरी पगडंडी हमें ऊपर की ओर ले जा रही थी, लगता था कोई नागिन रेंग रही हो। कभी आगे वाले अदृश्य तो कभी पीछे वाले। आँख मिचौनी-सी हो रही थी। कभी-कभी अग्रिम दल इस प्रकार समरेखा पर आ जाता कि हमें हमारी गति पर गर्व होता। पर सचाई तब प्रगट होती जब हम अनेक घुमाओं और मोड़ों को पारकर वहाँ पहुँच पाते। ऊपर पर्वत थे नीचे पर्वत थे बीच मे हमारे आचार्य के चरण-चिह्नों का अनुगमन करते हुए हम चल रहे थे। दोनों पार्श्व झाड़ झंकारों से ढके हुए थे। थी विषमता ही, पर बिना किसी स्पर्धा के वृक्ष निम्नवर्ती वृक्षों के शिर पर पैर रखे हुए थे। कलरव करते हुए निर्झर बह रहे थे। जल बिन्दुओं से अभि-सिक्त पवन हमारी थकानों को अपने अंचल में समेट ले जा रहा था। सूर्य की रश्मियाँ हमारा स्पर्श लुक-छिपकर ही कर पा रहीं थीं। वृक्ष चाहते थे कि वे पत्तों से छनकर ही हमारे तक पहुंच पाएं। पथ जल से भींगा-सा था। लगता था प्रकृति ने वातानुकूलित यंत्र की व्यवस्था कर रही है। वृक्षों, गुल्मों और लताओं के नाम और गुण धर्मों की पहिचान चल रही थी। आचार्य श्री जहाँ रुकते वहीं पारमार्थिक शिक्षण संस्था की बहिनों और साध्वियों के सगीत से पर्वत गूंज उठता था। लोग चलते-चलते ही अपनी प्रतिध्वनि सुनने को ही मुखर हो उठते थे। उल्लासपूर्ण वातावरण में हम डाक बंगला मे पहुंचे। दुपहरी में मन्दिर के सामने कार्यक्रम रखा गया। माना जाता है बीस तीर्थङ्कर इस पर्वत पर मुक्त हुए। पार्श्वनाथ की प्रसिद्धि अधिक है। सबमें ऊँची चोटी पर पार्श्वनाथ का मन्दिर है। वहाँ बैठे-बैठे हम दूसरे मन्दिरों को भी देख पा रहे थे। सैकडों व्यक्ति थे, कलकत्ता से यात्री आये हुए थे। कई साधु बोले कई श्रावक बोले। मैंने संस्कृत में आशु कविता की। आचार्य श्री ने प्रवचन किया। यात्रा का उद्देश्य बतलाया। राजगृह के पर्वतों के साथ तुलना करते हुए आचार्यप्रवर ने कहा—"वहाँ इतिहास बोल रहा है, यहाँ स्थिति उससे भिन्न है। ऐति-

हासिक खोज आवश्यक है। ऊंची चोटी पर बैठे थे। सबके मन कल्पना की ऊंची उड़ान भर रहे थे। भूमिवासी पर्वतवासी बनते हैं तब वे अपने को नई दुनिया में पाते हैं, नवीनता सचमुच सुखद होती है। कार्यक्रम समाप्त हुआ और हमारे पैर फिर विषम पगडंडियों की ओर बढ़े। छोटे-बड़े सभी मन्दिर हमारी दृष्टियों से ओझल नहीं रहे। पर्वत का शरीर हमारे स्पर्श से स्निग्ध हो और उसके स्पर्श से हम जैसे पुलकित हों वैसा लग रहा था। अनुभूतियाँ भाषा के जाल को तोड़कर उन्मुक्त विहार कर रही थीं। सूर्य ने चेतावनी दी, हम अपने स्थान पर आ गए।

सूर्य अभी दृश्य था। पर्वत के साम्राज्य की निराली बात। सरदी से लोग ठिठुरने लगे। अधिकांश यात्री मधुवनी व निमियाघाट को चले गए। कुछ वहीं रहे। संभावना थी उतनी सरदी नहीं लगी। बचाव के साधन भी तो बहुत नहीं थे। अभ्यास ही है जो बचा लेता है। इस दुनिया में अनन्त कौन होता है। रात बीती। सरदी ने अपने को छिपाना चाहा। सूर्य ने रश्मियों का जाल बिछा दिया। आचार्य श्री का अभियान मधुवनी की ओर हुआ।

उतार चढ़ाव किसने नहीं देखे। अनुभूति में अन्तर है। चढ़ाव की अनुभूति गर्वपूर्ण होती है। उतार की अनुभूति में वापसी का भाव होता है। चढ़ाव में फिर भी संतुलन रहता है। उतार में उसे रखना अधिक कठिन होता है। पैर रपटते जा रहे थे। मस्तिष्क पूरी सावधानी से नियंत्रण कर रहा था। पथ की लम्बाई में बहुत दृश्य थे। कुछ लोग भारी भरकम भी थे। कुछ स्त्रियां बहुत वृद्ध थीं। कल्पना करना कठिन था, वे इस चढ़ाव-उतार में साथ रह सकेंगी। कुछ कार्य कल्पना से परे होते हैं, वे साथ-साथ चले। देखने वालों को अचरज हुआ, वे स्वयं भी अचम्भे में थे। डोली पर बैठकर जो गए वे पछतावा किए बिना नहीं रहे।

मधुवनी भव्य स्थान है। वहाँ श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों सम्प्रदायों की विशाल धर्मशालाएं हैं, भव्य मन्दिर हैं, नए-नए बन रहे हैं। एक छोटा-मोटा नगर सा है। वहाँ समन्वय की चर्चाएं चलीं। आचार्य श्री

ने जैन धर्म के विशद रूप पर प्रकाश डाला। पारस्परिक समन्वय की अनुभूति में तीव्रता आ रही है—ऐसा प्रतीत हो रहा था।

ईसरी पार्श्वनाथ का स्टेशन है। वयोवृद्ध दिगम्बर विद्वान् गणेशप्रसाद वर्णी वहाँ रहते हैं। उनकी इच्छा थी कि आचार्य श्री यहाँ आएं। आचार्य श्री ने भी चाहा कि हम वहाँ जाएं। संयोग बना। तीन मील का विहार कर आचार्य श्री वहाँ पहुंचे। वर्णीजी बरामदा में बैठे थे। आचार्य श्री के आते ही उन्होंने कहा—"आपका धर्म-संघ बहुत ही संगठित है, अनुशासन अद्वितीय है।" प्रारम्भिक वार्ताएं चलीं। प्रवचन हुआ। वर्णीजी अस्वस्थ थे, वृद्ध थे, इसलिए बोलने में असमर्थ थे। भावना का प्रवाह रुकता नहीं, आखिर वे बोले। आचार्य श्री के सामने अणुव्रत-विकास और समन्वय का जैसे लक्ष्य है, वैसे वर्णीजी भी इनके प्रति सजग रहे हैं। यह मिलन उपाध्याय कवि अमरचन्दजी के मिलन की याद दिला रहा था। इसमें उतनी ही सजीवता और उतना ही सौहार्द था।

बोधगया महात्मा बुद्ध का बोध क्षेत्र है। वहाँ शंकर मठ और बोधि स्थल का मन्दिर प्रति स्पर्धा से खड़े हैं। स्पर्धा का युग बीत चुका। उनके अवशेष बचे हुए हैं। कभी जैन और बौद्ध सम्प्रदायों में भी स्पर्धा थी, आज वह लगभग मिट चुकी है। अब एक दूसरे को समझने की स्थिति में है। सबसे पहले चीनी मन्दिर की पुजारिन ह्यूह्वान ने आचार्य श्री का स्वागत किया। बोधि-स्थल के सामने आचार्य श्री ने प्रवचन किया और वहाँ भिक्षु सोमानन्दजी ने (मैनेजिंग कमेटी बोधगया की ओर से) स्वागत किया। लोग उल्लास का अनुभव कर रहे थे। और सुना गया कि ऐसा आकर्षण पहले नहीं देखा गया। वहाँ दलाईलामा की आचार्य श्री से भेंट होने वाली थी, पर उनका कार्यक्रम बदल गया। इसलिए वे नहीं आए। तिब्बती भिक्षुओं की दण्डासन, वन्दना और मालाजप सहज ही ध्यान खींच लेते थे। तिब्बती मन्दिर में हम गए। वहाँ भिक्षुओं की एक मण्डली प्रार्थना में लीन थी। उसका सहघोष सचमुच आनन्ददायी था। रात को हम शंकर मठ के अतिथि गृह में ठहरे। वहाँ के पीठपति सतानन्द गिरि ने आचार्य श्री

से भेंट की। एक दूसरे की परम्परा को समझने का यत्न किया। बोधगया का प्रसंग बहुत ही लुभावना रहा।

आचार्य श्री गया पधारे। वहाँ दिगम्बर जैन अच्छी स्थिति में हैं। आचार्य श्री को गया और बोधगया में ले जाने का श्रेय उन्हीं को था। आचार्य श्री को जैन धर्म के महान् प्रभावक आचार्य की दृष्टि से देख रहे थे। आपके आगमन से जैन धर्म की प्रभावना होगी—यह उनका तर्क था। वे श्वेताम्बर-दिगम्बर भेद को गौण मानते थे। गया के नागरिकों ने बहुत रुचि के साथ आचार्य श्री को सुना। विहार के समय दिगम्बर जैन-मन्दिर में गए। स्त्रियां स्वाध्याय में लीन थीं। आचार्य श्री इस पद्धति को बहुत पसन्द करते हैं। श्रावकगण वन्दना के लिए आए, तब वह थोड़ा स्वाध्याय अवश्य करें—ऐसा वे चाहते हैं।

गया से औरंगाबाद जा रहे थे। मार्ग में आजू-बाजू दो गाँव थे—सण्डाइल और कुसहा दोनों गाँवों के लोग दूध से भरे लोटे लिए खड़े थे। हम लोग थोड़े आगे थे। आचार्य श्री कुछ दूरी पर थे। लोगों ने वन्दना की और पूछा बड़ा बाबा कहाँ हैं? हमने उत्तर दिया पीछे आ रहे हैं। वे बोले बाबा आप जरा रुकिए और हमारा दूध लीजिए बड़ा बाबा पीछे आ रहे हैं—यह कह हमलोग आगे चले गए। आचार्य श्री आए उनकी प्रार्थना सुनी। कहा—दूध नहीं लेंगे।

हम गरीब हैं इसलिए तो? करुण स्वर में सब बोल उठे। हमने सुना कि आप अपने लिए बनाया भोजन नहीं लेते। यह दूध हमारी गायों का है, आपके लिए हमने कुछ बनाया नहीं है, फिर क्यों नहीं लेते।

आचार्य श्री ने कहा—आप हमारे लिए यहाँ ले आए, इसलिए कैसे लें? हम आपको इन झोंपड़ियों में ले जाकर क्यों कष्ट दें? यह सोच यहाँ लाए हैं बाबा और कोई बात नहीं है। यह दूध वापस नहीं जायेगा, लेना होगा। आचार्य श्री ने कहा—"आपकी श्रद्धा के अमृत के सामने दूध क्या चीज है? उसे मैं स्वीकार करता हूँ। वे अपनी बात पर डटे रहे। आचार्य श्री के सामने भी मर्यादा का प्रश्न था। सामने लायी हुई भिक्षा नहीं ली जा सकती। दौलतरामजी छाजेड़ बोल उठे, हम बाबा के भक्त हैं।

बाबा नहीं लेते तो भक्तों को दे दीजिए। बीच का मार्ग निकल आया, समस्या का समाधान हो गया। आचार्य श्री ने उनके श्रद्धा भाव का उल्लेख करते हुए एक दोहा बनाया।

सण्डाइल के जन खड़े, रोके जी० टी० रोड,
लोटे भर-भर दूध के लाए भक्ति विभोर॥

पौप कृष्ण चतुर्थी का प्रवास डालमियाँ नगर में हुआ। इससे पूर्व जे० के० नगर में आचार्य श्री रह चुके थे। औद्योगिक नगर में यह दूसरा प्रवास था। कलकत्ता से चलने के बाद दूसरी रात ठहरने का पहला प्रसंग था।

आचार्य श्री गत वर्ष कानपुर में चातुर्मास प्रवास कर चुके थे। लोग परिचित थे। उनकी सहज श्रद्धा में एक आकर्षण था। अणुव्रत विचार-धारा ने बहुतों के मन को छुआ है। उनमें जैन भी है, अजैन भी है। कारण स्पष्ट है—अणुव्रतों का स्वरूप जितना धार्मिक है उतना ही व्यावहारिक है। एक धर्माचरण का असर केवल व्यक्ति पर ही होता है और एक धर्माचरण का असर जितना व्यक्ति पर होता है उतना ही समाज पर होता है। अनैतिकता को त्यागने का असर व्यक्ति पर भी होता है और समाज पर भी होता है। इसलिए वह एक धार्मिक भी है और व्यावहारिक भी है। अणुव्रत-आन्दोलन हृदय-परिवर्तन का आन्दोलन है। आचार्य श्री साधन-शुद्धि में विश्वास करते हैं। इसलिए हठ-धर्मिता या बल-प्रयोग से अनैतिकता छुड़ाने को भी वे महत्व नहीं देते। इसका अर्थ यह नहीं कि हठ-धर्मिता से अनैतिकता बन्द नहीं होती। वह हो सकती है और होती भी है। पर साधन-शुद्धि में विश्वास करने वाला हठ-धर्मिता का समर्थन नहीं कर सकता। बल-प्रयोग राज्य-सत्ता का आरम्भ है। भारत सरकार ने अभी इसका प्रयोग नहीं किया है। वह भारतीय परम्परा को निभा रही है। पर व्यापारियों व उद्योगपतियों का मानस ऐसा ही रहा तो सरकार को बल-प्रयोग के लिए भी बाध्य होना पड़ जाए, यह असंभव नहीं है।

भारत धर्मप्रधान देश कहलाता है। कहा जाता है—यह विश्वका आध्यात्मिक गुरु रहा पर आज की स्थिति यह है कि व्यावहारिक सचाई में

यह बहुत पिछड़ा हुआ है। भारतीय लोग विदेश यात्रा से लौटते हैं उन राष्ट्रों की ईमानदारी की प्रशंसा करते हैं, जिन्हें भारतवासी भौतिकवादी शब्द मानते हैं। विदेशी लोग भारत की यात्रा में आते हैं। उन्हें यहाँ की ऊँची दार्शनिकता के प्रकाश में ईमानदारी का अंधेरा खलता है। आखिर यह स्थिति कब तक चलेगी ?

अणुव्रत-आन्दोलन की चुनौती को झेलने वाले बहुत थोड़े लोग हैं और जो हैं, वे भी प्रायः मध्यम वर्गीय हैं। बड़े लोगों के लिए शायद नैतिकता आवश्यक भी न हो। अनैतिकता के पीछे कोई सिद्धान्त नहीं होता फिर भी लोग उससे चिपके हुए हैं। अनैतिकता की परम्परा है जिसका उन्मूलन करना आवश्यक है।

इस आवश्यकता की चर्चा वहाँ चली और और स्थान में भी चलती है। आखिर चर्चा ही होती है। परिणाम क्रियान्विति से निकलता है। आचार्य श्री तुलसी नानऊ की नहर कोठी में ठहरे हुए थे। सन्ध्या बीत चुकी थी। प्रतिक्रमण हो चुका था। मुनिगण आचार्य श्री व ज्येष्ठ मुनियों को वन्दना कर रहा था। इधर आसपास के गाँवों के लोगों के झुण्ड के झुण्ड आ रहे थे। उनमें पुरुष भी थे, महिलाएं भी थीं, बालक, जवान और बूढ़े सभी थे।

इधर बर्फीली हवा छाती को चीर उस पार जा रही थी। दिन में भी शरीर ठिठुरता था। सूर्य के चले जाने पर सरदी का एकाकार साम्राज्य हो गया था पर श्रद्धा में जितना तेज है उतना किसी में नहीं है। उस सर्दी में भी लोग खुले प्रांगण में बैठे हुए थे। एक मुनि ने आचार्य श्री से निवेदन किया—लोग दूर-दूर से आए हैं सर्दी बहुत है, इसलिए प्रवचन प्रार्थना से पहले हो जाए तो अच्छा रहे। प्रवचन सम्पन्न हो गया। आगंतुक लोग अपने-अपने गांव को चले गए। आठ बजने को थे प्रार्थना का शब्द हुआ। मुनिगण एकत्र हुए। प्रार्थना शुरू हुई कोई दो एक पद गाए होंगे, इतने में एक मोटरकार आई। चन्दनमलजी कठौतिया ने आचार्य श्री के कानों में धीरे से कुछ कहा। आचार्य श्री पहले क्षण कुछ गंभीर थे और दूसरे क्षण प्रसन्न। वे बात का सिलसिला तोड़ ऊँचे स्वर से प्रार्थना गाने में लीन हो गए।

अनुमान जो लगा रहे थे वे सही थे। प्रार्थना के पूर्ण होते ही आचार्य श्री ने घोषित किया कि मंत्री मुनि का स्वर्गवास हो गया है। प्रार्थना के पश्चात् आज उनके स्वर्गवास के उपलक्ष में ध्यान किया जाए। आचार्य श्री ने ध्यान किया फिर उनका आदेश पाते ही सब साधु ध्यान में लीन हो गए। ध्यान पूर्ण होते ही मंत्री मुनि की स्मृतिया उभरने लगीं। वातावरण की स्तब्धता को दूर करते हुए आचार्य श्री ने कहा —

"पूज्य कालूगणी के स्वर्गवास के समय जो तीव्र अनुभूति हुई थी वैसी अनुभूति फिर कभी नहीं हुई। आज फिर एक विचित्र सी अनुभूति हो रही है। संवाद सुनते ही एक चोट सी लगी किन्तु दूसरे ही क्षण उस संवेदना को मैंने प्रसन्नता से दबाने का यत्न किया और मैं ऊँचे स्वर से प्रार्थना गाने लगा। यह निश्चित है कि एक दिन सब चले जाते हैं। मंत्री मुनि भी चले गए। पर वे अपनी मधुर स्मृतियां छोड़ कर गए हैं। वे अतुलनीय व्यक्ति थे। उनकी कमी को पूरा करने वाला कौन साधु है? कोई एक साधु उनकी विशेषताओं को न पा सके तो अनेक साधु मिलकर उनकी विशेषताओं को संजोलें, उन्हें जाने न दें। आचार्य श्री ने पूरे वातावरण को तन्मय बनाते हुए तत्काल एक दोहा बनाकर सुनाया।

वयोवृद्ध शासन सुखद मंत्री मगन महान,
माह विद छठ मंगलदिवस कर्‌यो स्वर्ग प्रस्थान।

हम लोग केवल सुन ही नहीं रहे थे। वार्त्ता को और आगे बढ़ा रहे थे। अतीत की स्मृतिया सहज ही मधुर होती है। मृत्यु के पश्चात् व्यक्ति नहीं रहता। उसकी स्मृतिया ही शेष रहती है। दैहिक अभाव स्मृतियों में और भी माधुर्य भर देता है।

मंत्री मुनि की स्मृतिया मृत-आत्मा की स्मृतिया नहीं थीं। वे इतनी सजीव थीं कि बीच-बीच में यह आभास हो रहा था कि वे अभी जीवित हैं। उनका स्वर्गवास कहाँ हुआ है? कौन कहता है उनका स्वर्गवास हो गया। आचार्य श्री ने स्मृतियों के मध्य ही कहा—क्या सचमुच ही मंत्री मुनि का स्वर्गवास हो गया। यह ऐसी घटना थी कि जो घटित होने पर भी अपना विश्वास नहीं जमा पाती थी। मंत्री मुनि का सामीप्य इतना

प्रगाढ़ था कि वे दूर होकर भी अपनी दूरी पर विश्वास उत्पन्न नहीं कर सके। पर अतीत आखिर अतीत ही होता है। उसके पास स्मृतियों के सिवाय और क्या शेष रहता है? स्मृतियां फिर आगे बढ़ी। आचार्य श्री ने हृदय के अन्तस्तल के भावों की अभिव्यक्ति के साथ-साथ ही कहा—

अद्भुत अतुल मनोबलि, शासन स्तम्भ सधीर,
दृढ़ प्रतिज्ञ सुस्थिर मति, आज विलायो वीर।
उदाहरण गुरु भक्ति को, दिल को बड़ो वजीर,
सागर सो गम्भीर वो, आज विलायो वीर॥
विनयी विज्ञ विशाल जो, मनो द्रौपदी चीर,
सफल सुफल जीवन मगन, आज विलायो वीर॥
नानऊ कोठी नहर में, सांझ प्रार्थना-लीन,
सुन सचित्र सारा रह्या, उदासीन आसीन॥
रिक्त स्थान मुनि मगन रो, भरो संघ के संत,
मगन मगन पथ अनुसरो, करो मतो मतिवंत॥
'सुख' अब कर अनसन सुखे आज फली तुज आस,
हाथा में थारे हुयवो, बाबा रो सुरवास॥"

हम लोग आचार्य श्री की भावना के उतार-चढ़ाव को देख रहे थे और आचार्य श्री हमारी उत्सुक भावना को देख रहे थे। आचार्य श्री ने कहा पूज्य कालूगणी के स्वर्गवास के बाद वे मेरे बड़े सहयोगी रहे हैं। उस संधिकाल में जब पूज्यश्री कालूगणी का स्वर्गवास हुआ और मैंने छोटी अवस्था में गण का उत्तरदायित्व सम्भाला। यदि वे नहीं होते तो मुझे न जाने किन-किन कठिनाइयों का अनुभव होता?

उनकी गणनिष्ठा अपूर्व थी, गणी के प्रति उनके जैसा विनयभाव अन्यत्र दुर्लभ है। वे गण और गणी सबका हित और विकास चाहते थे। वे संकल्प के धनी थे। जो निर्णय कर लेते उस पर अडिग रहते। उनका हृदय बहुत ही सुदृढ़ था। वे जितने दृढ़ संकल्पी और निर्भीक थे, उतने ही विवेकी थे। आचार्य की इच्छा का बहुत सम्मान करते थे। उन्हें जो सम्मान मिला वैसा सम्भवतः आज तक किसी भी साधु को नहीं मिला।

इतना पाकर भी वे निरभिमान थे। मंत्री मुनि की गम्भीरता भी अपूर्व थी बात को पचाने की शक्ति भी विलक्षण थी। किसको क्या कहना चाहिए और किसको क्या, कब कितना कहना चाहिए। इसका उन्हें पूर्ण विवेक था। विवेक की क्या बात ? उनकी हर बात मे विवेक टपकता था एक दिन वे आए और बोले आप कभी-कभी सबके सामने मुझे उलाहना दिया करें। मेरा तो उससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं, दूसरों को एक बोध-पाठ मिलेगा। उनकी प्रबुद्ध चेतना ने जो पाया, जो दिया, वह असाधारण है, वे आज हमारे बीच नहीं रहे हैं। उनकी स्मृतियां तभी फल ला सकती है जब कि उनकी विशेषताओं को उन्हीं के साथ जाने न दिया जाए।

दिल्ली भारत की ही राजधानी नहीं है, वह अतिथियों की भी राजधानी है। उसकी प्रसिद्धि शासन-परिचालन के लिए ही नहीं है, वह स्वागत के लिए भी प्रसिद्ध है। सरदी का मौसम एक दृष्टि से स्वागत का मौसम है। आचार्य श्री भी इसी मौसम में वहाँ पहुंचे। पब्लिक-लाइब्रेरी में स्वागत का आयोजन था। वक्ताओं में अनेक विशिष्ट व्यक्ति थे। आचार्य श्री के स्वागत में जैनेन्द्र कुमार जी ने कहा—"दिल्ली भारत की राजधानी है। यहाँ स्वागत होता ही रहता है। अधिकांश स्वागत हवाई होता है। यह स्वागत उससे भिन्न है, धरती पर चलने वालों का है। हवा में उड़ने वाले लोगों को छोटा बनाते है। उन्हें आदमी चींटी जैसा लगता है। आचार्य श्री रोटी दूसरों से लेते है, उन्हें देना सिखाते है उन्हें बड़े बनाते है। पैदल चलते है दूसरों को यह अनुभूति करने का अवसर देते है कि इससे तुम सब बड़े हो, कम-से-कम बराबर तो हो।"

कार्यक्रम की समाप्ति होने पर आचार्य श्री ने कहा—"उस समय हंगरी की प्रसिद्ध चित्रकार महिला एलिजाबेथ वहीं उपस्थित थी। आचार्य श्री ने कहा—आप हिन्दी भाषा नहीं जानती फिर भी इतने लम्बे समय तक कैसे बैठी रहती हो। वह सहसा बोली—"प्रेम की भाषा अलग ही होती है। बोलचाल की भाषा के समझने वाले बहुत होते है पर प्रेम की भाषा को समझने वाले बहुत नहीं होते।

दिल्ली मे स्वल्पकालीन प्रवास हुआ। उसमें कुछ महत्त्वपूर्ण गोष्ठियां

हुई। राष्ट्रपति और नेहरूजी को तेरापंथ द्विशताब्दी के महत्त्वपूर्ण कार्यक्रमों की जानकारी दी। स्वर्गीय बालकृष्ण शर्मा नवीन अस्पताल में थे। आचार्य श्री वहाँ पधारे। कुछ लोग इस धारणा में हैं कि आचार्य श्री सबको अपने पास बुलाते हैं वे किसी के पास नहीं जाते। आचार्य श्री का चिन्तन भिन्न है। उन्हें दूसरों के पास जाकर मिलने में संकोच नहीं है। दूसरे लोग उनके पास आएं, उसमें भी उन्हें कोई आपत्ति नहीं है। प्रश्न सुविधा का शेष रहता है। हम सर्वदा पाद-विहारी हैं। इसलिए इतस्ततः जाने में जो हमें कठिनाई है, वह उन्हें नहीं होती जो यान-विहारी हैं। इसी यात्रा में थोड़े दिनों पहले आचार्य श्री प्रयाग में थे। वहाँ पुरुषोत्तमदासजी टण्डन के घर पधारे। लगभग १ घंटा वहाँ ठहरे। आचार्य श्री ने कुछ सुनाया कुछ सुना। आचार्य श्री विनिमय में विश्वास करते हैं। वे अपने को जितना दाता नहीं मानते, उतना ग्राहक मानते हैं। यह विद्यार्थीभाव ही उनकी अपनी विशेषता है।

इस वर्ष का मर्यादा-महोत्सव हांसी में हुआ। पंजाबी लोगों का उत्साह देखते ही बनता था। महोत्सव के समय साधु, साध्वियों की उपस्थिति कम थी। इस अवसर पर व्यवस्था की दृष्टि से जो कार्य आचार्य श्री को करना होता है, वह भी नहीं हुआ। फिर भी भावी कार्य-क्रम के संकेत (जो स्वरचित गीतिका में था) और महत्त्वपूर्ण घोषणाओं के कारण महोत्सव अपने आप में विशेषता लिए हुए था। आचार्य श्री ने महोत्सव के समय की गई घोषणा के अनुसार एक पत्र लिखा, घोर तपस्वी मुनि श्री सुखलाल जी के पास ले जाने के लिये मुझे भेजा। आचार्य श्री ने हिसार से राजगढ़ की ओर विहार किया। हम छः साधु डाबड़ी होते हुए सरदारशहर पहुँचे। एक दिन हम चौबीस मील चले। फाल्गुन शुक्ला द्वितीया को पहुँचना था। कुछ कठिनाइयां भी आई पर लक्ष्य निश्चित था। आचार्य श्री का आशीर्वचन साथ था, इसलिए ठीक समय पर पहुँच गए, जब पहुँचना चाहिए था, उसी वेला में पहुंच गए। आचार्य श्री का आदेश पालित हुआ इससे हम आनन्दित थे। घोर तपस्वी आचार्य श्री का सन्देश पाकर प्रफुल्लित थे। उनके अनशन का १६ वां दिन चल रहा

था। शरीर क्षीण हो चुका था, वे आत्मबल के सहारे जी रहे थे। उनका जीवन शान्ति और स्वाध्याय का उदाहरण बन रहा था। जीवन और मृत्यु से निरपेक्ष जीवन वे जी रहे थे।

हजारों की उपस्थिति में मैंने आचार्य श्री का सन्देश-पत्र पढ़ा। पत्र सजीव था। सजीव व्यक्ति के लिए लिखा गया था, पढ़ने में भी सजीवता का अनुभव हुआ। पत्र की प्रत्येक पंक्ति को तपस्वी ने अपने शिर चढ़ाया। पत्र के साक्षात्कार से उन्हें आचार्य श्री के साक्षात्कार जैसा अनुभव हुआ। कहीं कहीं व्यक्ति की अपेक्षा वाणी अधिक गहराई में बैठती है। उस दिन वाणी का चमत्कार मैंने देखा। दो ढाई घंटे तक घोर तपस्वी मूर्तिवत् शांत बैठे रहे। उल्लास उनकी नस-नस में नाच रहा था। आचार्य श्री के दर्शन की भावना साकार होती लग रही थी। आचार्य श्री पंचमी को पधारने वाले थे। राजगढ़ में आचार्य श्री का महान् स्वागत हुआ। अनेक दरवाजे बने, इसलिए महान नहीं, महान् इसलिए कि उसमें सभी जातियों के लोग सम्मिलित थे। आचार्य श्री नहीं चाहते थे कि उनके आगमन के उपलक्ष में कोई आडम्बर हो। भावावेश में जनता ने वैसा कर डाला। मुसलमानों ने अपने मुहल्ले में, हरिजनों ने अपने मुहल्ले में दरवाजे बनाए। आचार्य श्री ने उन्हें समझाया कि स्वागत ऐसा न हो, वह त्याग-तपस्या के द्वारा हो।

चतुर्थी को आचार्य श्री चूरू और सरदारशहर के बीच थे। भंवरलाल जी दूगड़ आदि कुछ व्यक्ति गए। उन्होंने निवेदन किया कि कल तक तपस्वीजी के जीवित रहने की संभावना नहीं है। आचार्य श्री ने १६ मील का विहार किया, सरदारशहर पहुँचे। दुपहरी में धूप में देखा कि लक्ष्य की पूर्ति के लिए कितना कष्ट सहना होता है, किस प्रकार पसीना बहाना होता है।

परिशिष्ट

: १ :

विहार क्षेत्र की मर्यादा

'आगम' सूत्रों के प्रति कुछ एक लोगों का दृष्टिकोण जितना श्रद्धापूर्ण है शायद उतना विवेकपूर्ण नहीं है। कोरी श्रद्धा से एकान्तिक आग्रह बढ़ता है। श्रद्धा और विवेक का समन्वय हो तो आगमों के आशय को सही रूप में समझने का अवसर मिलता है।

एकान्त दृष्टि का एक उदाहरण आचार्य श्री की कलकत्ता यात्रा को लेकर किया जानेवाला ऊहापोह है! कुछ लोग कहते हैं—भगवान् ने पूर्व में अङ्ग-मगध से आगे जाने का निषेध किया है इसलिए जैन मुनि कलकत्ता नहीं जा सकते। उनका यह कहना एक दृष्टि से सही भी है, किन्तु वे इसको एकान्त-दृष्टि कहते हैं, इसलिए गलत भी है।

भगवान् ने जो कहा वह यह है—"कप्पई निग्गंथाणं वा निग्गंथीणं वह पुरत्थिमेणं जाव अंग—मगहाओ एत्तए, दक्खिणेणं जाव कोसंवीओ, पच्चत्थिमेणं जाव थूणाविसयाओ, उत्तरेण जाव कुणालाविसयाओ एत्तए। एताव ताव कप्पाइ! एताव ताव आरिए खेत्ते। णो से कप्पइ एत्तो वाहिं। इसका अर्थ है—निग्रन्थ और निग्रन्थनी साकेत के पूर्व में अङ्ग-मगध तक दक्षिण में कौशाम्बी तक, पश्चिम में स्थणा तक और उत्तर में कुणाला तक विहार कर सकते हैं! इतने ही क्षेत्र आर्य क्षेत्र हैं। इससे बाहर जाना नहीं कलपता। किन्तु इससे आगे जहाँ ज्ञान-दर्शन और चारित्र की वृद्धि हो, वहाँ जाना कल्पता है।" वृहत्कल्प भाष्य के अनुसार जब भगवान् महावीर का साकेत के सुभूमिभाग नामक ऊद्यान में विहार कर रहे थे तब यह उपदेश दिया था।

इसके अनुसार इस समय जैन साधुओं का विहार क्षेत्र आधुनिक विहार, पूर्वीय उत्तर-प्रदेश, पश्चिमीय उत्तर-प्रदेश के कुछ भाग तथा पंजाब के कुछ भाग तक ही सीमित था। अङ्ग जनपद वर्तमान भागलपुर और मुंगेर जिलों के साथ उत्तर में कोसी नदी तक फैला हुआ था।

मगध जनपद वर्तमान गया और पटना जिलों के अन्तर्गत फैला हुआ था। ये दोनों नगर आधुनिक बिहार प्रान्त में हैं। कौशाम्बी वत्स देश

की राजधानी थी। वत्स देश काशी से सटा हुआ था। वर्तमान में इलाहाबाद से लगभग ३० मील की दूरी पर पश्चिम में यमुना नदी के किनारे स्थित कोसम गाँव को कौशाम्बी माना जाता है। यह उत्तर प्रदेश मे है।

स्थूणा आधुनिक स्थानेश्वर है। यह कुरुक्षेत्र के समीप है यह सम्राट् हर्षवर्द्धन की प्रारम्भिक राजधानी थी। यह पजाब में है। यह सरस्वती और घाघरा नदी के बीच का भाग है। कुणाल :—उस समय कोशल देश दो भागों मे विभक्त था। दक्षिण कोशल, जिसकी राजधानी साकेत थी। उत्तर कोशल जिसकी राजधानी श्रावस्ती थी। कुणाला उत्तर कोशल का एक गाँव है। जो उत्तर प्रदेश में है।

बृहत्कल्प की मर्यादा के अनुसार उस समय विहार क्षेत्र बहुत सीमित था। राजस्थान, गुजरात, सौराष्ट्र, बम्बई, महाराष्ट्र और दक्षिण पथ—ये सारे इस सीमा से बाहर थे। बंगाल, आसाम, उड़ीसा, मध्यप्रदेश भी इस सीमा मे नहीं थे। भगवान् महावीर ने प्रज्ञापना पद (१) में साढ़े पचीस आर्य देश बतलाए है।

जनपद	राजधानी
(१) मगध	राजगृह
(२) अङ्ग	चम्पा
(३) वङ्ग	ताम्रलिपि
(४) कलिङ्ग	काचनपुर
(५) काशी	वाराणसी
(६) कोशल	साकेत
(७) कुरु	गजपुर (हस्तिनापुर)
(८) कुशावर्त	शोरिक (शौरीपुर)
(९) पाञ्चाल	कम्पिल्य (कंपिला)
(१०) जाङ्गल	अहिछत्रा
(११) सौराष्ट्र	द्वारावती
(१२) विदेह	मिथिला

(१३) वत्स कौशाम्बी
(१४) शाण्डिल्य नन्दिपुर
(१५) मलय भद्दिलपुर
(१६) मत्स्य वैराट
(१७) वरणा अच्छा
(१८) दशार्ण मृत्तिकावती
(१९) चेदि शुक्तिमति
(२०) सिन्धु-सौवीर वीतभय
(२१) शूरसेन मथुरा
(२२) भंगी पावा
(२३) वर्तक मांसपुरी
(२४) कुणाल श्रावस्ती
(२५) लाढ कोटिवर्ष
(२५½) केकय (अर्ध) श्वेतिका

ये भी किसी विशेष अपेक्षा से बतलाए गए हैं। इनमें दक्षिण एक भी देश का नाम नहीं है। सम्भवतः यह विभाग तीर्थंकर जन्म-क्षेत्र की अपेक्षा से है। "इत्थुप्पत्ति जिणाणं चक्कीणंराम क" (प्रज्ञापना पद १) भगवान् ने बंगाल में विहार किया था। लाढ़ ःि बंगाल को कहा जाता था।

एक स्थान में २५॥ जनपदों को आर्य देश कहा है और दूसरे स्थान विहार-क्षेत्र की जो छोटी-सी सीमा निश्चित की है उसीको आर्य-क्षेत्र व है। इस विरोधाभास से ही यह तात्पर्य निकल जाता है कि आर्य। उतना ही नहीं है, किन्तु जिस समय भगवान् ने यह व्यवस्था की समय उतना ही क्षेत्र साधुओं के लिए विहार करने के लिए उचित इसलिए उसी को विहार की दृष्टि से आर्य-

इस सूत्र के दो अंश हैं। पहला
विधि। यह निषेध, ज्ञान, दर्शन और
किया गया है। किन्तु जहाँ जाने से ज्ञान, ... चारित्र की ९।

हो वहाँ जाने में आपत्ति नहीं। यह स्पष्ट अपेक्षा है। इसीके आधार पर जैन श्रमण राजस्थान, गुजरात, आदि में विहार करने लगे।

आरोप लगाने वालों को शायद यह पता ही नहीं है कि जो प्रश्न वे कलकत्ता के लिए उपस्थित करते है वही प्रश्न राजस्थान के लिए भी वैसा ही है। वे आज सब कुछ राजस्थान को ध्यान में रखकर ही सोचते है। इस सूत्र का जो अगला अंश है—"तेणपर जत्थ नाण दसण चरित्ताइ उस्सप्पन्ति" इसका अर्थ टब्बाकार ने वहाँ से आगे जाने पर ज्ञान, दर्शन चारित्र घटता है—किया है। किन्तु यह सही नहीं है। इस टब्बा के आधार पर कुछ ग्रन्थों मे जैसे जीवराजजी स्वामी की जोड में भी यह अर्थ लिया गया है।

उस्सप्पति धातु का अर्थ घटना नहीं होता। इसका संस्कृत रूप 'उत्सर्पति' होता है, जिसका अर्थ है बढना, फैलना, क्रमिक विकास होना। 'उस्सप्पिणी' और 'ओसिसप्पिणी' ये दोनो हमारे प्रचलित शब्द है। पहले का अर्थ उत्सर्पिणी काल—यह काल जिसमें क्रमशः वृद्धि होती है और दूसरे का अर्थ है—अवसर्पिणी यह उसी 'उस्सप्प' धातु से बना हुआ है।

मुर्शिदाबाद के विजयसिंहजी आदि कुछ लोगो ने आचार्यवर श्री कालूगणी के सामने यह प्रश्न उपस्थित किया कि वृहत्कल्प के इस सूत्र के आधार पर क्या मुनि बंगाल नहीं जा सकते? प्रश्न उपस्थित हुआ तब इस पर चिंतन किया गया। चिंतन के मध्य यह पाया गया कि टब्बाकार ने जो अर्थ किया है वह प्रामाणिक नहीं है। आपने अपनी प्रति में से उस अर्थ को साधुओं से कटवा दिया। फिर आपने कहा—इसे काटना नहीं चाहिए। यह उचित भी है। किसी ने कोई अर्थ किया हो, उसे काटने का अधिकार कैसे हो सकता है। उसे प्रामाणिक मानें या न मानें, यह हमारी श्रद्धा और विवेक पर निर्भर है।

इतिहास का अध्ययन करने वाले जानते हैं कि सम्राट सम्प्रति से पहले जैन श्रमणों की विहार भूमि प्रधानतः वही थी जिसका विधान वृहत्कल्प में है। संप्रति के समय से उनकी विहार-भूमि बदली। जैन श्रमण महाराष्ट्र और दक्षिण तक फैल गए और वर्तमान स्थिति यह है कि वृहत्कल्प में विहार-क्षेत्र की जो मर्यादा है वहाँ न तो स्थानीय लोगों में जैन श्रावक ही हैं और न जैन साधु ही वहाँ साधाणतया विहार करते हैं। अपवाद रूप से कोई कभी चले जाते हैं, इन सारी दृष्टियों से देखा जाए तो यह विहारक्षेत्र की मर्यादा का प्रश्न जो उपस्थित किया जाता है वह अपेक्षा दृष्टि और इतिहास की अनभिज्ञता का परिणाम है।



परिशिष्ट

: २ :

कब कहाँ क्या ?

लाडनू से कानपुर

७ फरवरी—भावी लम्बी यात्रा के लिए जन्म-भूमि (लाडनू) में विदाई समारोह ।

१० „ —बांगड़ कालेज डीडवाना में प्रवचन ।

१४ „ —बोरावड़ में सार्वजनिक अभिनन्दन तथा दीक्षा-समारोह ।

१६ „ —मदनगंज (किसनगढ़) में सैकड़ों विद्यार्थियों तथा नागरिकों द्वारा स्वागत और विद्यार्थियों द्वारा अणुव्रत ग्रहण ।

२० „ —के० डी० जैन हाईस्कूल (मदनगंज) में प्रवचन ।

२१ „ —दरबार कालेज (किसनगढ़) में प्रवचन ।

२६ „ —जयपुर में राजस्थान के मुख्य मंत्री श्री मोहनलाल सुखाड़िया, वित्त मंत्री श्री हरिभाऊ उपाध्याय तथा अन्य सम्भ्रान्त नागरिकों द्वारा 'अणुव्रत-पण्डाल' में स्वागत-समारोह ।

२६ „ —नवनिर्मित राजस्थान कालेज में प्रवचन ।

२ मार्च—जयपुर मेडिकल कालेज में प्रवचन ।

१३ „ —'दोसा' में सार्वजनिक प्रवचन तथा नगर-पालिका के अध्यक्ष श्री नाथूलाल शर्मा आदि विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा व्रत-ग्रहण ।

१६ „ —'महुआ' हाईस्कूल के विशाल-हाल में सार्वजनिक-प्रवचन ।

१८ „ —'भरतपुर' में हिन्दी साहित्य-समिति भवन में विशेष प्रवचन तथा समिति के अध्यक्ष श्री कुञ्जविहारी लाल द्वारा सार्वजनिक अभिनन्दन ।

२३ „ —आगरा में अचल-भवन में नागरिक सम्मेलन में प्रवचन ।

२५ „ —आगरा में केन्द्रीय कारागृह में प्रवचन तथा कारागृह के सुपरिंटेण्डेण्ट श्री के० एल० वर्मा द्वारा कारागृह की गति-विधियों का दिग्दर्शन ।

२६ मार्च — आगरा-अचल-भवन में श्वेताम्बर-दिगम्बर, जैनों की ओर से आयोजित एक विशेष सभा में 'जैन सस्कृतिक-समन्वय' पर प्रवचन, मुनि कवि अमरचन्दजी का भाषण।

३० „ —हाथरस में सार्वजनिक अभिनन्दन-समारोह।

२ अप्रैल —हाथरस मे व्यापारियो द्वारा मिलावट न करने की प्रतिज्ञा लेने के अवसर पर प्रेरणाप्रद सन्देश।

२ „ —लालकोठी (हाथरस) में आयोजित महावीर जयन्ती पर प्रवचन।

२ „ —कन्या गुरुकुल में प्रवचन तथा रात्रिकालीन गोष्ठी। गुरुकुल की प्रधानाचार्या श्री लक्ष्मी देवी तथा चन्दा देवी द्वारा अभिनन्दन।

४ „ —अलीगढ़ मे सार्वजनिक अभिनन्दन-समारोह।

४ „ —अलीगढ़ गोकुल-भवन मे विद्वन् गोष्ठी का आयोजन।

४ „ —अलीगढ़ मालवीय पुस्तकालय में विशेष सभा में प्रवचन।

५ „ —अलीगढ़ नगर-पालिका की ओर से नागरिक सम्मेलन का आयोजन तथा आचार्य प्रवर का प्रवचन।

८ „ —पिलुआ के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में स्वागत-समारोह तथा विद्यार्थियो द्वारा व्रत-ग्रहण।

६ „ —एटा मे घण्टाघर के विशाल-मैदान में स्वागत-समारोह।

६ „ —एटा के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में जैन-संस्कृत सम्मेलन में प्रवचन।

१० „ —एटा जिला भ्रष्टाचार विरोधक समिति की ओर से आयोजन।

१४ „ —वेवर में सार्वजनिक प्रवचन।

१५ „ —छिबरामऊ में बृहत् नागरिक सभा में प्रवचन तथा फरुखाबाद जिला कांग्रेस के अध्यक्ष श्री मथुराप्रसाद त्रिपाठी द्वारा स्वागत-भाषण।

१६ „ —कानपुर—श्रद्धानन्द पार्क में कानपुर के नागरिकों द्वारा आचार्य श्री का अभिनन्दन।

२५ अप्रैल —कानपुर—बार एशोसियेशन के सदस्यों के बीच प्रवचन।

२६ „ —कानपुर—श्री जुहारी देवी बालिका विद्यापीठ में प्रवचन।

२६ „ —कानपुर—रोटरी क्लब में प्रवचन तथा क्लब के अध्यक्ष श्री पी० डी० सिंहानियां द्वारा स्वागत-भाषण।

२७ „ —कानपुर—उत्तरप्रदेशीय मर्चेन्ट्स चेम्बर के रजत जयन्ती वर्षीय प्रथम परिषद् में प्रवचन।

२७ „ —कानपुर—साहित्य-गोष्ठी का आयोजन।

६ मई—लखनऊ—उत्तरप्रदेश के मुख्य मंत्री डा० सम्पूर्णानन्द आदि मंत्रियों तथा सम्भ्रान्त नागरिकों द्वारा सार्वजनिक अभिनन्दन और भाषण।

१५, „ —लखनऊ—गंगाप्रसाद—मेमोरियल हाल में उत्तरप्रदेशीय अणुव्रत सम्मेलन का आयोजन तथा उत्तरप्रदेश-विधान सभा के अध्यक्ष श्री ए० जी० खरे द्वारा भाषण।

२७ „ —इन्टोजा—इन्टोजा—समाज शिक्षा उपकेन्द्र में प्रवचन तथा जिज्ञासाओं का समाधान।

३१ „ —सीतापुर में जेल रोड पर सार्वजनिक अभिनन्दन।

४ जून—सीतापुर के कारावास में प्रवचन तथा रात में साहित्य-गोष्ठी।

६ „ —सीतापुर—भारत-सेवक समाज की ओर से आयोजित महिला प्रशिक्षण-शिविर में प्रवचन। शिविर संचालिका कुमारी सावित्री श्री वास्तव द्वारा अभिनन्दन भाषण।

७ „ —सीतापुर—नेत्र चिकित्सालय में प्रवचन। प्रमुख चिकित्सक एवं सीतापुर नगरपालिका के अध्यक्ष डा० हरिकिशनलाल पाटनी द्वारा धन्यवाद अर्पण।

„ ७ — बार एशोसियेशन में वकीलों के बीच प्रवचन।

१२ „ सीतापुर—मुरारका—भवन में कांग्रेस अध्यक्ष यू० एन० ढेबर का आगमन तथा विभिन्न गांवों से समागत कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं में आचार्य प्रवर का प्रवचन।

१६ जून —इटोजा भारत सेवक समाज की ओर से चल रहे कार्यकर्त्ता प्रशिक्षण-शिविर में प्रवचन।

१६ „ —लखनऊ—भारत सेवक समाज लखनऊ की ओर से विशेष प्रवचन का आयोजन।

२६ „ —कानपुर में चतुर्मास के लिए प्रवेश तथा सम्भ्रान्त नागरिकों द्वारा अभिनन्दन समारोह।

६ जुलाई —विचार परिषद् में प्रवचन तथा सायं 'बाघला भवन' में व्यापारियों के बीच प्रवचन।

१४ „ —कानपुर दलित संघ द्वारा अपने २३ वें वार्षिक सम्मेलन के अवसर आयोजित भ्रष्टाचार निरोधक सम्मेलन में प्रवचन।

३० „ —विचार-गोष्ठी के आयोजन में जैन विद्वान श्री दलसुख भाई मालवणिया का "भारतीय वाङ्मय में जैन आगमों का स्थान" पर भाषण तथा आचार्य प्रवर का प्रवचन।

१ अगस्त —अखिल भारतीय अणुव्रती कार्यकर्त्ता गोष्ठी पर मंगल प्रवचन पर भारतवासियों को सन्देश।

४ „ —के० ई० एम० हाल फूलबाग में उत्तरप्रदेशीय कार्यकर्त्ता शिविर में मंगल-प्रवचन तथा विधान-सभा के अध्यक्ष श्री त्रिपाठी द्वारा उद्घाटन।

२ सितम्बर—B.N S D. कालेज में विद्यार्थी उद्बोधन सप्ताह का उपशिक्षा मंत्री श्री कैलाशप्रकाश द्वारा उद्घाटन तथा आचार्य प्रवर द्वारा मंगल प्रवचन।

१० „ व्यापारी उद्बोधन सप्ताह का प्रारम्भ तथा आचार्य प्रवर का प्रवचन—पर्यूषण पर्व व्याख्यान माला का प्रवचन।

१३ „ उत्तरप्रदेश व्यापार-मण्डल में प्रवचन।

२१ „ आचार्य श्री के २३ वें आचार्य पदारोहण दिवस के उपलक्ष में सार्वजनिक अभिनन्दन-समारोह।

२८ „ लोक-सभा के अध्यक्ष श्री अनन्त शयनम् आयंगर के सान्निध्य में संस्कृत-साहित्य-गोष्ठी का आयोजन।

६ अक्टूबर—स्वदेशी बाग जूही में एकत्रित हजारों श्रमिकों के बीच प्रवचन।

१९, २०, २१, २२ अक्टूबर को नवम वार्षिक अधिवेशन के चतुर्वर्षीय कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न कार्यक्रमों में प्रेरणाप्रद सन्देश तथा उत्तरप्रदेश के राज्यपाल श्री वी० वी० गिरि तथा अन्य मंत्रियों से विचार विमर्श।

२७ अक्टूबर—दीक्षा-समारोह

२ नवम्बर—अहिंसा-दिवस का विराट् आयोजन

१२ ,, आचार्य प्रवर का जन्मोत्सव समारोह

१३ ,, विदाई-समारोह में अंतिम संदेश।

× × × ×

विशेष :—

लाडनूं से आचार्य प्रवर फाल्गुन कृष्णा ४ को चले और जयपुर, आगरा, अलीगढ़, हाथरस, कानपुर, लखनऊ, सीतापुर होते हुए कानपुर चातुर्मास के लिए अषाढ़ शुक्ला १० को पधारे। इसमें लगभग १,००० मील की यात्रा हुई और लगभग १२० गांवों तथा शहरों में जाना हुआ। कहीं आधा दिन, कहीं एक दो दिन और कहीं इससे अधिक भी रहना हुआ।

कानपुर से कलकत्ता

७ दिसम्बर—प्रयाग में पुरुषोत्तमदास टण्डन द्वारा सार्वजनिक स्वागत।

८ ,, हिन्दी साहित्य-सम्मेलन भवन में आयोजित साहित्य-गोष्ठी में विशेष प्रवचन।

८ ,, —त्रिवेणी संगम पर प्रवचन।

१२ ,, —भूसी (प्रतिष्ठानपुर) आश्रम के अधिष्ठाता श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी द्वारा आचार्य प्रवर का स्वागत और भाषण।

१७ ,, महाबोधि सोसाइटी की ओर से सारनाथ के बुद्ध मंदिर में प्रवचन का आयोजन।

१८ दिसम्बर—वाराणसी के टाउन हाल में सार्वजनिक अभिनन्दन समारोह महामहोपाध्याय श्री गिरिधर शर्मा, डा० मंगलदेव शास्त्री, राजाप्रियानन्द सिंह, दलसुख भाई मालवणिया, लक्ष्मीचंद जैन, स्वर्गीय महेन्द्रकुमारजी जैन, आदि द्वारा स्वागत—भाषण।

१९ „ हिन्दू विश्वविद्यालय क्लब में प्राध्यापकों के बीच "सुखवाद, दुःखवाद" के विषय में प्रवचन। तथा क्लब के साहित्य मंत्री डा० गोरखप्रसादजी श्रीवास्तव द्वारा धन्यवादार्पण।

२० „ स्याद्वाद महाविद्यालय के प्रिंसिपल प० कैलाशचन्द्र शास्त्री द्वारा अभिनन्दन-भाषण।

२० „ बौद्ध जगत् के विद्वान् भिक्षु जगदीश काश्यप तथा हिन्दी जगत् के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी से 'आगम-अन्वेषण' कार्य पर बातचीत।

२१ „ पार्श्वनाथ जन मंदिर भेलूपुर में सार्वजनिक प्रवचन तथा जैन श्वेताम्बर तीर्थ सोसाइटी के अध्यक्ष श्री सुन्दरलाल जैन द्वारा स्वागत-भाषण।

२१ „ काशीविद्यापीठ में प्रवचन तथा मुनि श्री नथमलजी द्वारा आशु कविता।

२२ „ वाराणसी संस्कृत-विद्यालय के विद्वद्-परिषद् में महत्त्वपूर्ण आयोजन तथा मुनि श्री नथमलजी द्वारा स्याद्वाद पर संस्कृत में भाषण।

२२ „ नागरी प्रचारिणी सभा में प्रवचन।
हिन्दू विश्वविद्यालय स्थित श्री विश्वनाथ-मंदिर में रात्रि-कालीन प्रवचन तथा साहित्य-गोष्ठी।

३० „ बक्सर में सार्वजनिक सभा में प्रवचन।

३१ „ केन्द्रीय कारावास बक्सर में प्रातःकालीन प्रवचन।

१ जनवरी—पटना में विराट् नागरिक स्वागत।

४ „ —आरा में एच० डी० जैन कालेज में स्वागत-समारोह।

कालेज के प्रिंसिपल श्री परसदेसराय द्वारा अभिनन्दन तथा मुनि श्री श्रीचन्दजी 'कमल' द्वारा अवधान प्रस्तुत।

८ जनवरी—हिन्दी साहित्य-सम्मेलन भवन में साहित्य-गोष्ठी। श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' आदि प्रमुख कवियों का भाषण।

८ „ न्यू पुलिस लाइन में पुलिसों के बीच प्रवचन।

६ „ ह्वीलर सीनेट हाल में बिहार के राज्यपाल डा० जाकिर हुसेन द्वारा विद्यार्थी-सम्मेलन का उद्घाटन तथा आचार्य प्रवर का प्रेरक सन्देश।

१० „ —पटना मेडिकल कालेज में प्रवचन। कालेज के प्रिंसिपल डा० गयाप्रसादजी द्वारा स्वागत भाषण।

११ „ बिहार राज्य-भवन में अवधान प्रयोग के कार्यक्रम में प्रवचन।

११ „ बिहार वाणिज्य-मण्डल में प्रवचन।

११ „ ह्वीलर सीनेट हाल में पटना विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों तथा महाविद्यालय के विभागाध्यक्षों, प्राचार्यों तथा प्राध्यापकों की सभा में 'स्वतंत्र भारत और वर्त्तमान शिक्षा-प्रणाली' पर प्रवचन।

१२ „ पटना सिटी में स्वागत-समारोह।

१५ „ —पावापुरी में पदार्पण तथा समवसरण, जल मंदिर आदि में प्रवचन।

१५ „ नालन्दा में प्रवचन।

१६ „ नालन्दा में ध्वंसावशेषों का निरीक्षण, नवनालन्दा महाविहार पाली इन्स्टीट्यूट की ओर से अभिनन्दन समारोह तथा इन्स्टीट्यूट के विद्यार्थी और अधिकारियों द्वारा संस्कृत, अंग्रेजी तथा पाली भाषा में अभिनन्दन-पत्रार्पण आचार्य प्रवर द्वारा प्राकृत भाषा में प्रेरणा-सन्देश।

१७ „ —राजगृह में प्रवेश—

स्थानीय श्वेताम्बर जैन धर्मशाला में महासभा द्वारा

आयोजित 'जैन संस्कृति समारोह में' 'जैन वाङ्मय का आधुनिकीकरण' पर प्रवचन।

१८ जनवरी—राजगृह में 'जैन संस्कृति-समारोह' की दूसरी बैठक में प्रवचन। सर्वोदयी विद्वान श्री जयप्रकाश नारायण का भाषण।

१६ „ विद्वानों से आगम कार्य विषयक विचार-विमर्श।

१६ „ वैभार पर्वतारोहण तथा वहाँ पुंडरीशिलापट्ट पर प्रभावोत्पादक प्रवचन तथा संकल्प।

२३ „ लछवाड़ से दूर 'जन्म-स्थान' पर प्रवचन।

२७ „ जसीडीह में 'गणतंत्र-दिवस' पर प्रवचन।

२८ „ अम्बर चर्खा विद्यालय में प्रवचन।

२८ „ आरोग्य मंदिर में प्रवचन महावीर प्रसाद द्वारा आभार प्रदर्शन।

३० „ वैद्यनाथ धाम देवघर के हिन्दी विद्यापीठ में प्रवचन।

फरवरी—बंगाल में प्रवेश—

८ „ —सैंथिया में पदार्पण और स्थानीय स्कूल में सार्वजनिक—अभिनन्दन।

१४ „ मर्यादा-महोत्सव का आयोजन।

१८ „ सैंथिया में अवधान कार्यक्रम में प्रवचन।

२२ „ शांतिनिकेतन के चीन भवन में प्रवचन तथा क्षिति मोहन सेन से वार्त्तालाप।

८ मार्च—कलकत्ता में प्रवेश।

× × × ×

विशेष :—

कानपुर से आचार्य प्रवर मृगसिर कृष्णा १ को चले और इलाहाबाद, वाराणसी, पटना, राजगृह, सैंथिया, बर्द्धमान होते हुए फाल्गुन कृष्णा १४ को कलकत्ता पधारे। इसमें लगभग ८०० मील की यात्रा हुई और लगभग १०० गावों तथा शहरों में जाना हुआ। हजारों अणुव्रती बने।

'कलकत्ता-प्रवास' में हुए आयोजन

८ मार्च —११ A लोअर चितपुर रोड पर अवस्थित महाकाय पंडाल में श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा के तत्वावधान में विभिन्न संस्थाओं द्वारा आचार्य श्री तुलसी का स्वागत।

१५ „ —महाजाति-सदन में खाद्य मंत्री प्रफुल्लचन्द्र सेन द्वारा आयोजित सभा में आचार्य श्री का प्रवचन तथा श्री जयप्रकाश नारायण व श्री जैनेन्द्रकुमारजी के भाषण।

२० „ —शिक्षायतन हाल में भारतीय संस्कृति संसद के तत्त्वावधान में महाबोधि सोसाइटी के अध्यक्ष तथा संसद सदस्य श्री नालिनाक्षदत्त की अध्यक्षता में आयोजित एक सभा में 'भारतीय संस्कृति' पर प्रवचन।

२१ „ —मर्चेण्ट्स चेम्बर आफ कार्मस की ओर से दिगम्बर जैन विद्यालय में आयोजित व्यापारियों की सभा में प्रवचन तथा चेम्बर के अध्यक्ष श्री सांवलराम गोयनका का स्वागत भाषण।

२३ „ —कलकत्ता यूनिवर्सिटी इन्स्टीट्यूट हाल में महाबोधि सोसाइटी कलकत्ता द्वारा आयोजित सभा में अहिंसा पर भाषण।

२७ „ —श्री जैन श्वेताम्बर स्थानक वासी (गुजराती) संघ पोलक स्ट्रीट में प्रवचन।

२६ „ —कलकत्ता म्यूजियम के जादूगर कक्ष में जैन-दर्शन के अनुसार 'पुद्गल और जीव' पर विशेष प्रवचन। पुरातत्त्व विभाग के अधीक्षक श्री के० सी० कार द्वारा स्वागत और म्यूजियम निरीक्षण।

„ „ —रोयल एसियाटिक सोसाइटी कलकत्ता में "जैन आगमों में भारतीय जीवन" पर विचार। सोसाइटी के भाषा सचिव तथा संस्कृत महाविद्यालय के आचार्य डा० गौरीनाथ शास्त्री द्वारा आचार्यप्रवर का अभिनन्दन।

३० „ —"जैन-सभा" कलकत्ता की ओर से आयोजित सभा में 'जैन-धर्म' पर प्रवचन।

३० मार्च — सेठ सूरजमल जालान गर्ल्स कालेज में प्रवचन।

१ अप्रैल —तिरहट्टी बाजार के पण्डाल में मुनि श्री महेन्द्रकुमारजी द्वारा प्रस्तुत अवधान प्रयोगों में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री जे० पी० मित्तल आदि विशिष्ट व्यक्तियों में प्रवचन।

२ „ —४६ इण्डियन मिरर स्ट्रीट में स्थित 'कुमारसिंह हाल' में पश्चिम बगाल विधान-सभा के अध्यक्ष तथा देश के प्रसिद्ध भाषाविद् श्री सुनीतिकुमार चटर्जी तथा अन्य सम्भ्रान्त नागरिकों के सम्मुख मुनि श्री श्रीचन्दजी द्वारा अवधान-प्रयोग के आयोजन में प्रवचन।

३ „ आचार्य श्री के दक्षिण कलकत्ता पदार्पण के अवसर पर सदर्न एवन्यू में निर्मित विशाल पडाल में दक्षिण कलकत्ता वासियों की ओर से अभिनन्दन।

४ „ —सदर्न एवेन्यू मे स्थित रामकृष्ण मिशन इन्स्टीट्यूट् के नवनिर्मित-भवन के चौक में अ० भा० अणुव्रत समिति की ओर से आयोजित 'मैत्री-दिवस' के विराट् आयोजन मे प्रवचन। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री एस० आर० दास द्वारा उद्घाटन भाषण।

६ „ —आशुतोष महिला कालेज में प्रवचन तथा कालेज के प्रिंसपल मेजर जे० सी० वनर्जी द्वारा स्वागत।

१० „ —"पूर्व भारत जैन सम्मेलन" में प्रवचन। कांग्रेस के महामंत्री श्री तख्तमलजी जैन ने इसका उद्घाटन किया और श्री पूनम चन्दजी राका इसके अध्यक्ष थे।

१२ „ —मैत्री-दिवस की एक विशेष बैठक में प्रवचन। प्रतिरक्षा मंत्री श्री कृष्णमेनन तथा कलकत्ता नगर के महापौर बनर्जी का भाषण।

२१ „ —महावीर जयन्ती के उपलक्ष में जैन सभा द्वारा आयोजित सभा में प्रवचन।

२२ „ —अखिल भारतीय अणुव्रत समिति द्वारा आयोजित "कवि

सम्मेलन" में "साहित्य और साहित्यकार" पर प्रवचन।

२५ अप्रैल —इस्ट इण्डिया जूट एण्ड एक्सचेंज हाल में प्रवचन।

२६ „ —काशीपुर में स्थित सूरज जूट प्रेस के मैदान में कर्मवाद पर प्रवचन।

१ मई —काशीपुर में स्थित रेल्वे गोदाम में वहाँ के जूट उद्योग के व्यापारियों तथा कर्मचारियों में भाषण।

३ „ —जूट ब्रोकर्स एसोसियेसन द्वारा आयोजित सभा में प्रवचन।

४ „ —कशीपुर क्लब के तत्वावधान में ४, दमदम रोड स्थित क्लब में प्रवचन। क्लब के अध्यक्ष एवं काशीपुर गन एण्ड शेल फैक्ट्री के अधीक्षक एन० इ० पार्थसारथि ने स्वागत-भाषण किया।

१० „ —काशीपुर में अक्षय तृतीया पर विशेष प्रवचन तथा कलकत्ता चातुर्मास की घोषणा।

११ „ —अणुव्रत विचार-परिषद् में प्रवचन।

१३ „ —साहित्यकारों की गोष्ठी में "साहित्यकारों का कर्त्तव्य" पर भाषण तथा विचार-विमर्श।

१५ " —दमदम स्थित "कुमार आशुतोष उच्च विद्यालय में" छात्राओं के समक्ष प्रवचन।

१६ „ —काशीपुर में पाट व्यवसायियों द्वारा अणुव्रत-ग्रहण के अवसर पर आचार्य प्रवर का प्रेरक सन्देश।

१७ „ —वेलगछियां स्थित श्री दिगम्बर जैन मंदिर में प्रवचन।

१८ „ —मानिकतल्ला स्थित श्री श्वेताम्बर पार्श्वनाथ मंदिर (दादाबाड़ी) में प्रवचन।

२० „ —६ अलीपुर पार्क प्लेस में स्थित श्री शान्ति प्रसाद जी जैन के "साहूनिलय" में "मानव-जीवन का ध्येय" पर प्रवचन।

२१ „ —उपरोक्त स्थान पर "अनाग्रह बुद्धि" पर प्रवचन।

२५ „ —ओसवाल नवयुवक समिति द्वारा आयोजित सभा में "युवक-सम्मेलन" में विशेष प्रवचन। संसद सदस्या एवं अखिल

भारतीय कांग्रेस महासमिति की महा मन्त्रिणी श्रीमती सुचेता कृपलानी का भाषण।

२६ मई —अणुव्रत-गोष्ठी में प्रवचन।

२६ „ —जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा में आयोजित "महिला-सम्मेलन" नारी के कर्त्तव्य पर प्रवचन।

३० „ —महासभा-भवन में आयोजित पत्रकार-सम्मेलन में प्रवचन।

३० „ —महासभा-भवन में आयोजित विद्यार्थी-सम्मेलन में प्रवचन।

३० „ —महासभा-भवन में आयोजित युवक-सम्मेलन में प्रवचन।

६ जून —केन्द्रीय रेल मन्त्री श्री जगजीवनराम की उपस्थिति में अणुव्रत-गोष्ठी का आयोजन और आचार्य प्रवर का प्रवचन।

७ „ —गवर्नमेंट प्लेस में स्थित आयकर-आयुक्त के कार्यालय में आयकर विभाग के पदाधिकारियों के बीच प्रवचन। पश्चिम बंगाल के आयकर-आयुक्त श्री सुमत प्रसाद जैन द्वारा अभिनन्दन।

१४ „ —८१ सदर्न एवेन्यु स्थित "सुराना निवास" में फिल्म निर्माताओं निर्देशकों एवं कलाकारों के सम्मेलन में प्रवचन तथा दिग्सूचन।

१७ „ —कलकत्ता अणुव्रत समिति एवं अणुव्रत विद्यार्थी परिषद् कलकत्ता के संयुक्त तत्वावधान में चल रहे पंच दिवसीय अणुव्रत विद्यार्थी शिविर की परिसमाप्ति के अवसर पर प्रेरक सन्देश।

२० „ —बालीगंज में आयोजित 'अणुव्रत विचार-परिषद्' में प्रवचन।

२१ „ —बालीगंज 'सुराना-निवास' में अणुव्रत विचार-परिषद् में प्रवचन तथा संसद सदस्य साधन गुप्त (कम्युनिस्ट) बार-एट-ला का भाषण।

२८ „ —हेस्टिंग्स स्थित "प्रभु-निवास" में अणुव्रत-विचार-परिषद् में "समाजवादी समाज-रचना और अणुव्रत आन्दोलन" के विषय में प्रवचन तथा केन्द्रीय यातायात एवं परिवहन मन्त्री श्री एम० के० पाटिल का भाषण।

१० जुलाई—लिलुआ में सार्वजनिक प्रवचन।

११ „ —जी० टी० रोड पर स्थित प्रतापमल गोविन्दराम के भवन में "धर्म और विज्ञान" पर प्रवचन।

१२ जुलाई—चातुर्मासिक स्थिति के आगमन पर "प्रवचन-पंडाल" में विशेष प्रवचन।

१६ „ —प्रवचन-पंडाल में "जैन-दर्शन" पर प्रवचन।

१६ „ —बंकिम चटर्जी स्ट्रीट में स्थित वंगीय संस्कृत साहित्य-परिषद् में 'संस्कृत और संस्कृति' पर प्रवचन।

२० „ 'तेरापंथ-स्थापना-दिवस' पर विशेष सन्देश।

२६ „ अणुव्रत-विचार-परिषद् की सभा में प्रवचन।

६ अगस्त —प्रवचन-पण्डाल में महासभा द्वारा आयोजित विचार-परिषद् में प्रवचन तथा ईरानी वाणिज्य दूत तथा डा० चोपड़ा का भाषण।

१५ „ —प्रवचन-पण्डाल में 'स्वतंत्रता-दिवस' पर प्रवचन।

„ „ —समाज-सुधार सप्ताह का प्रारम्भ।

१६ „ —"अणुव्रत विद्यार्थी सप्ताह" के प्रथम दिवस पर नगर की विभिन्न शिक्षण-संस्थाओं के विद्यार्थी, शिक्षक एवं अभिभावकों के सम्मुख प्रवचन-पण्डाल में प्रवचन। शिक्षा मंत्री श्री हरिन्द्रराय चौधरी द्वारा सप्ताह का उद्घाटन।

१७ „ —अमेरिका के भारत स्थित सांस्कृतिक सचिव श्री डनकन इमरिक का दर्शनार्थ आगमन और विचार-विमर्श।

२० „ —फ्रांसीसी वाणिज्य दूत श्री ए० मासा० सादे का आगमन और विचार-विमर्श।

„ „ —पंजाब नेशनल बैंक में प्रवचन।

२२ „ —कस्टम हाउस में प्रवचन। सेण्ट्रल एक्साइज़ कलेक्टर श्री एस० सी० कम्पनी द्वारा स्वागत-भाषण।

२३ „ —ओसवाल नवयुवक समिति द्वारा संचालित समाज-सुधार सप्ताह की पूर्णाहुति-कार्यक्रम में प्रवचन।

२६ „ —सेन्ट्रल बैंक में प्रवचन।

„ „ —स्माल काज कोर्ट के वकीलों एवं न्यायाधीशों के बीच प्रवचन।

३० अगस्त —अणुव्रत विद्यार्थी परिषद् द्वारा आयोजित वाद-विवाद प्रतियोगिता के आयोजन में प्रवचन।

३१ „ —पर्यूषण-पर्व के नवाह्निक कार्यक्रमों में जैन-दर्शन सम्बन्धी विशेष प्रवचन।

११ सितम्बर—"२४ वें वार्षिक आचार्य पदारोहण दिवस" के उपलक्ष में आचार्य श्री का सार्वजनिक अभिनन्दन समारोह एवं आचार्य प्रवर का सन्देश।

१३ " —आइजन होवर और निकिता ख्रुश्चेव के मिलन-प्रसंग पर आचार्य श्री का सन्देश।

" " —द्विशताब्दी-दिवस के कार्य-क्रम निर्धारण सभा में विशेष प्रवचन।

१४ " —चर्मोत्सव पर विशेष सभा।

२० " —वेलगछिया 'जैन-मन्दिर' (पार्श्वनाथ उपवन) में श्री जैन सभा द्वारा आयोजित क्षमापना-दिवस पर प्रवचन

३० " —अणुव्रत-विचार गोष्ठी में प्रवचन तथा लोक-सभा के अध्यक्ष श्री अनन्तशयनम् आयंगर का भाषण।

३ अक्टूबर —चार्टर्ड बैंक में प्रवचन।

४ अक्टूबर —'अहिंसा-दिवस' के उपलक्ष में आयोजित सभा में प्रवचन तथा अन्य मतावलम्बी विद्वानों के भाषण। बौद्ध भिक्षु जगदीश काश्यप का भाषण।

१६, १७, १८ अक्टूबर—अणुव्रत-आन्दोलन के वार्षीय अधिवेशन में प्रवचन तथा भावी कार्यक्रमों की ओर दिशा-संकेत।

२० अक्टूबर—तेरापंथी द्विशताब्दी-समारोह के विचारार्थ एक सभा में प्रवचन।

२१ " —'तेरापंथ द्विशताब्दी समारोह' के सम्बन्ध में विचारार्थ प्रवचन-पण्डाल में आयोजित एक सभा में प्रवचन।

२ नवम्बर —श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा द्वारा आयोजित जन्म जयन्ती पर सिंहावलोकनात्मक प्रवचन। सन्मार्ग दैनिक

के सम्पादक श्री अनन्त मिश्र, दैनिक लोकमान्य के संचालक श्री रमाशंकर त्रिपाठी, डा० राधा विनोदपाल आदि द्वारा श्रद्धांजलि समर्पण।

३ नवम्बर—चातुर्मासोपरान्त विहार की घोषणा एवं कार्तिक में दीक्षा-समारोह की स्वीकृति।

८ " दीक्षा-समारोह में प्रवचन।

१५ " विदाई-समारोह।

१६ " कलकत्ता से प्रस्थान

कलकत्ता से सरदारशहर

१६ " राजस्थान की ओर प्रस्थान।

२२ " वर्द्धमान में सार्वजनिक अभिनन्दन समारोह, पश्चिम बंगाल के श्रम-मन्त्री श्री अब्दुल सत्तार द्वारा स्वागत भाषण।

मृ० कृ० १० —दुर्गापुर में इन्जीनियर T. K. डागा के साथ निर्मीयमाण लोहे के कारखाने का निरीक्षण।

मृ० कृ० ११ —रानीगंज में 'मारवाड़ी सनातन विद्यालय' में रात्रीकालीन प्रवचन तथा अणुव्रत-ग्रहण।

मृ० कृ० १२ —जे० के० नगर की अल्युमूनियम फैक्ट्री के श्रमिकों के बीच प्रवचन तथा उपमैनेजर R. D. राव द्वारा स्वागत भाषण।

मृ० कृ० १४ —मैथोन

मृ० शु० १ झरिया ननवाणी भोजनालय में प्रवचन। स्थानक वासी सम्प्रदाय के अग्रणी श्री वीरजी भाई के मकान में रात्री कालीन प्रवचन।

मृ० शु० ६—निमियाघाट—पार्श्वनाथ पर्वतारोहण ४४७५ फुट ऊँची चोटी पर सैकड़ों नर-नारियों के बीच प्रवचन।

" ७—मधुवन सैकड़ों नर-नारियों के बीच प्रवचन तथा श्वेताम्बर संघ के प्रधान श्री रिखबचन्द जी दूगड़ द्वारा स्वागत।

" ८—ईसड़ी—दिगम्बर सम्प्रदाय के विद्वान गणेशप्रसाद जी वर्णी से वार्तालाप तथा संयुक्त प्रवचन।

„ १०—तलैया बाध (कोडरमा)—तलैया बाँध होते हुए कोडरमा पदार्पण और सार्वजनिक अभिनन्दन।

१४ दिसम्बर—बौद्ध गया में पदार्पण। स्थानीय विद्यालयों के छात्र, विभिन्न संस्थाओं के कार्यकर्ता तथा सम्भ्रान्त जैन-अजैन नागरिकों द्वारा तथा बौद्ध-मन्दिर व्यवस्था समिति की ओर से अभिनन्दन समारोह तथा बोधि वृक्ष के सामने विशाल मैदान में प्रवचन।

१५ " —शकराचार्य मठ के महन्त श्री शतानन्द गिरी के साथ विचार-विमर्श।

„ „ गया के दिगम्बर जैन भवन में आयोजित सार्वजनिक सभा में प्रवचन।

„ „ राय वागेश्वरी प्रसाद के बंगले में आयोजित विचार-गोष्ठी में प्रवचन।

„ „ स्वागत समारोह तथा साहित्य-गोष्ठी में प्रवचन। श्री वनविहारीप्रसाद भूप द्वारा अभिनन्दन-भाषण।

१८ „ —डालमियानगर—में रोहतास इन्डस्ट्रीज के मैनेजिंग डाइरेक्टर श्री अशोककुमार जी जैन तथा अन्य अधिकारियों द्वारा आचार्य श्री का स्वागत तथा रात्रि में अभिनन्दन-समारोह।

१६ „ —रोहतास इण्डस्ट्रीज के अन्तर्गत संचालित विभिन्न औद्योगिक संस्थानों का पर्यवेक्षण।

२५ „ —वाराणसी श्री दिगम्बर जैन धर्मशाला में सार्वजनिक सभा में प्रवचन। महामहोपाध्याय श्री गिरिधर शर्मा, राजा-प्रियानन्द प्रतापसिंह, कैलाशचन्द्र शास्त्री द्वारा अभिनन्दन भाषण।

३० „ —इलाहाबाद में महापौर श्री विश्वम्भरनाथ पांडेय द्वारा सार्वजनिक अभिनन्दन तथा आचार्य प्रवर का प्रवचन।

गोस्वामी-पत्र के सम्पादक श्री महादेव गिरि द्वारा 'महा-लोक' का समर्पण।

३१ „ —पुरुषोत्तमदास टण्डन के घर वार्त्तालाप।

८ जनवरी ६०—कानपुर में खत्री-धर्मशाला में सार्वजनिक अभिनन्दन समारोह। सुप्रसिद्ध उद्योगपति श्री पद्मपत सिंहानियाँ द्वारा स्वागत भाषण।

१६ „ —नानऊ की नहर कोठी में ग्रामीणों के बीच प्रवचन तथा मंत्री मुनि के देहावसान पर विशेष सभा।

२० „ —अलीगढ़ में रामलीला भवन में रात्रिकालीन प्रवचन तथा स्वामी विवेकानन्दजी द्वारा स्वागत-भाषण।

२४ „ —दिल्ली की पब्लिक लाइब्रेरी में स्वागत-समारोह। श्री सत्नारायण, अमनजी, जैनेन्द्रकुमार, यशपाल जैन आदि विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा स्वागत-भाषण।

२६ „ —गणतन्त्र-दिवस की झाँकियों का पर्यवेक्षण।

२८ „ —कठौतिया भवन (सब्जीमण्डी) में नेपाल के प्रधान मंत्री श्री कोइराला से वार्त्तालाप।

२८ „ —बिड़ला हायर सेकण्ड्री स्कूल में प्रवचन। केन्द्रीय शिक्षा सचिव श्री के० जी० सैयदन व केन्द्रीय कृषि मंत्री श्री पंजाबराव देशमुख के अभिभाषण। बिड़ला-मंदिर में आयोजित प्रेस कान्फ्रेंस में प्रवचन।

२६ „ —प्रातः ६ बजे भारत के प्रधान मन्त्री जवाहरलाल जी की कोठी पर नेहरू जी से वार्त्तालाप।

„ „ —प्रातः ११ बजे राष्ट्रपति भवन में डा० राजेन्द्रप्रसाद जी से विचार-विमर्श तथा द्विशताब्दी आदि कार्यक्रमों की झाँकियां प्रस्तुत।

„ „ —बिड़ला-मन्दिर के गीता-भवन में अणुव्रत विचार परिषद् के आयोजन में प्रवचन तथा सुप्रीम कोर्ट के चीफ

जस्टिस श्री B. P. Sinha, जैनेन्द्रकुमार, मुनि नथमलजी मुनि नगराज जी के भाषण।

३ फरवरी —हांसी में पदार्पण और पंजाब सरकार की ओर से पंजाब राज्य के खाद्य मन्त्री पं० मोहनलालजी शर्मा द्वारा अभिनन्दन तथा कुमार जसवन्तसिंह जी, रामशरणजी, आदि द्वारा अभिनन्दन पत्र समर्पण। आचार्य श्री का प्रवचन।

" " —पंजाब प्रान्तीय अणुव्रत समिति के वार्षिक अधिवेशन में दिशा-संकेत तथा मोहनलालजी शर्मा का भाषण।

६ " —हांसी के सनातन उच्च विद्यालय के विशाल प्राङ्गण में मर्यादा-महोत्सव पर विशेष सन्देश तथा तेरापंथ धर्म-संघ की मर्यादाओं का संक्षिप्त विश्लेषण तथा कई महत्वपूर्ण घोषणाएं।

फाल्गुन कृ० १३—राजगढ़ में विभिन्न वर्गों द्वारा अभिनन्दन-समारोह।

१६ फरवरी —सरदारशहर में प्रवेश तथा घोर तपस्वी मुनि श्री सुखलालजी के साक्षात् दर्शन

× × × ×

विशेष :—

कलकत्ते से आचार्य प्रवर मृगसिर कृष्णा १ को चले और वर्द्धमान, दुर्गापुर, माइथोन, मधुवन, ईसड़ी, गया, डालमियानगर, वाराणसी, इलाहाबाद, कानपुर, एटा, अलीगढ़, दिल्ली, हांसी, हिसार, राजगढ़, चूरू, होते हुए फाल्गुन कृष्णा ४ को सरदारशहर पधारे। इसमें लगभग १३०० मील की यात्रा हुई और लगभग १६५ गांवों तथा शहरों में जाना हुआ।

